वर्तमान भारत में आयुर्वेद चिकित्सा प्रणालीकी प्रमाणिकता एवं प्रासंगिकता

इंदुजा दुबे

शोध छात्र संस्कृत विभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट, सतना (मध्य प्रदेश)

डॉ0 अतुल कुमार दुबे

असिस्टेंट प्रोफेसर,
विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
हर्ष विद्या मंदिर पी.जी. कॉलेज,
रायसी, हरिद्वार (उत्तराखंड)

शोध सारांश

आयुर्वेद विश्व की सबसे प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति है जो अनादि और शाश्वत है ऋग्वेद जो कि मनुष्य जाति के लिए उपलब्ध प्राचीनतम शास्त्र है आयुर्वेद की उत्पत्ति भी ऋग्वेद के कल से ही है ऋग्वेद के अलावा अथर्ववेद में भी आयुर्वेदिक विषयक उल्लेख हैं तथा आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपवेद माना जाता है। भारतीय वांग्मय में वेद प्राचीनता और पवित्रता की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। ये भारतीय धर्म, साहित्य, दर्शन व संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैद्यवेदों में ही मानव जीवन के अंकुर विद्यमान है। यह एक ज्ञातव्य तथ्य है की आयुर्वेद ऋग्वेद का उपांग है परन्तु इसमें औषधि ,उपचार आदि का अधिक सटीक वर्णन प्राप्त न होने के कारण है आयुर्वेदाचार्यों ने इसको अथर्ववेद का उपांग स्वीकार किया है। वैदिक काल से लेकर वर्त्तमान समय तक इस भूपटल पर विद्यमान चिकित्सा प्रणालियों में आयुर्वेदीय–चिकित्सा प्रणाली अग्रगण्य है। 'आयुर्वेद' शब्द आयु और वेद दो पदों के मेल से निष्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है आयु का ज्ञान अर्थात् 'आयुर्वेद' जीवन से सम्बन्धित परिपूर्ण ज्ञान है। आयुर्वेद को परिभाषित करते हुए महर्षि चरक ने कहा है कि –

हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते।।[1]

अर्थात् हित आयु ,अहित आयु ,सुख आयु ,दुःख आयु तथा उस आयु के लिये जो हितकर (द्रव्य, गुण, कर्मादि) अथवा जो अहितकर (द्रव्य ,गुण ,कर्मादि), आयु का मान और उसके लक्षणों वर्णन का जिसमें होता है ,उसको आयुर्वेद कहते है।

मूल शब्द– आयुर्वेद, चिकित्सा, प्रमाण, प्रणाली, उपचार, निरोग, संहिता, दर्शन, योग।

उद्देश्य (Objecative)–

1. आयुर्वेद–चिकित्सा में प्रत्यक्ष प्रमाणिकता के महत्त्व एवं उपयोगिता का प्रतिपादन करना।
2. राष्ट्रीय उत्थान के लिए आयुर्वेद एवं संहिता प्रयुक्त चिकित्सकीय ज्ञान के क्षेत्र को व्यापक और उपयोगी बनाना।
3. आयुर्वेद के वर्तमान चिकित्सा प्रणाली को भारतीय संस्कृति एवं वेद–वेदांग के आधार पर प्रभावी एवं प्रासंगिक बनाना।

शोध विषय–

'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'मा' धातु से करण अर्थ में ल्युट् (अन) प्रत्यय लगाने पर 'प्रमाण' शब्द निष्पन्न होता है, जिसका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है– **'प्रमीयतेऽननेति प्रमाणम्'**[2]। प्रमाण शब्द का समान्य अर्थ है– साक्षी या सिद्ध हुआ। प्रमाणों के स्वरूप को दर्शनाचार्यों ने अपने–अपने दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है। वैशेषिक दर्शन के आचार्य कणाद प्रमाण का लक्षण प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि–

अज्ञातार्थ ज्ञापक प्रमाणमिति प्रमाणसामान्य लक्षणम्[3] अर्थात् अज्ञातार्थ का प्रकाशक ज्ञान प्रमाण कहलाता है। तर्क संग्रहकार के अनुसार– **प्रमाकरणं प्रमाणम्**[4] अर्थात् यथार्थ ज्ञान का साधन प्रमाण है। वैशेषिकसूत्र में **अदुष्ट विद्या**[5] को प्रमाण कहा गया है। अर्थात् निर्दोष ज्ञान विद्या है, कणाद ने प्रमाण का यह समान्य लक्षण निर्दिष्ट किया है। न्यायवार्तिकार ने प्रमाण को परिभाषित करते हुए कहा है–**अर्थोपलब्धिर्हेतुः प्रमाणम्**[6] अर्थात् यथार्थ–अर्थ उपलब्धि का कारण प्रमाण है। वात्स्यायन के अनुसार – **प्रमातायेनार्थ प्रमणोति तत्प्रमाणम्**[7] अर्थात् जिस साधन द्वारा प्रमाता अर्थ का ज्ञान प्राप्त करता है, उसे प्रमाण कहते है। अतः यथार्थ ज्ञान को प्रमा तथा इसे प्राप्त करने के साधन को प्रमाण कहा जाता है। उपर्युक्त सभी परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि यथार्थ ज्ञान का जो साधन है, वह प्रमाण है। समस्त दर्शनाचार्यों ने पदार्थों के यथार्थ स्वरूप के ज्ञान के लिए प्रमाण को आवश्यक तत्त्व के रूप में स्वीकृत किया है।

4. प्रमाणिकता की संख्या पर दृष्टिपात –

दर्शनाचार्यों ने पदार्थों के यथार्थ स्वरूप के ज्ञान के लिए प्रमाण को आवश्यक तत्त्व के रूप में स्वीकृत किया है, परन्तु इन सभी में प्रमाणों की संख्या निर्धारण के परिप्रेक्ष्य में मतभेद दृष्टिगोचर होता है। जैसा **न्याय**[8] दर्शन के अनुसार– प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द इन चार प्रमाणों को स्वाकारते हैं, वहीं सांख्य[9], योग[10] व जैन दर्शन[11] – प्रत्यक्ष, अनुमान एवं शब्द के रूप में तीन ही प्रमाणों का उल्लेख करते हैं। प्रभाकर मत के अनुयायी मीमांसक– प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द एवं अर्थापत्ति[12] तथा कुमारिलभट्ट के अनुयायी मीमांसक– प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति व अभाव इन छः प्रमाणों की बात करते हैं। जबकि चार्वाक दर्शन एकमात्र प्रत्यक्ष प्रमाण को मानता है, वहीं बौद्ध दर्शन, वैशेषिक दर्शन– प्रत्यक्ष और अनुमान[13] को स्वीकारते है।

इसी प्रकार आयुर्वेद के आचार्यों में भी अन्य दार्शनिको की भाँति प्रमाणों की संख्या निर्धारण में मत वैभिन्य दिखाई देता है। यथा– आचार्य चरक ने प्रत्यक्ष, अनुमान एवं शब्द, युक्ति[14] तथा आचार्य सुश्रुत– पञ्चेन्द्रिय और प्रश्न को प्रमाण मानते हैं।[15] अष्टांगहृदयम्[16] व भाव प्रकाश में– दर्शन, स्पर्शन तथा प्रश्न को प्रमाणों के रूप में मान्यता दी है।

प्रत्यक्ष प्रमाण– प्रत्यक्ष शब्द, प्रति और अक्ष दो पदों के योग से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है– आँखों के सामने, परन्तु न्याय दर्शन में अक्ष शब्द इन्द्रियों का द्योतक है, जैसा कि कहा भी गया है कि– **अक्षमक्षम् प्रतीत्योंत्पद्यते इति प्रत्यक्षम्।**[17] अतः यहाँ अक्ष शब्द का अर्थ इन्द्रिय और वृत्ति का अर्थ सन्निकर्ष किया गया है, अर्थात् इन्द्रिय का उनके विषय के साथ सम्बन्ध होने पर उत्पन्न ज्ञान प्रत्यक्ष कहलाता है।

आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपवेद माना जाता है। भारतीय वांग्मय में वेद प्राचीनता और पवित्रता की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। ये भारतीय धर्म, साहित्य, दर्शन व संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैद्यवेदों में ही मानव जीवन के अंकुर विद्यमान है। यह एक ज्ञातव्य तथ्य है की आयुर्वेद ऋग्वेद का उपांग है परन्तु इसमें औषधि ,उपचार आदि का अधिक सटीक वर्णन प्राप्त न होने के कारण है आयुर्वेदाचार्यों ने इसको अथर्ववेद का उपांग स्वीकार किया है।

प्रत्यक्ष की परिभाषा–

विभिन आचार्यो ने प्रत्यक्ष को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है।

प्रत्यक्षं तु खलु तथा यत्न स्वयमिन्द्रियैः मनसा चोपलभ्यते।[1]

अर्थात् प्रत्यक्ष उसको कहते है जोज्ञान स्वयम इन्द्रियों और मन से प्राप्त किया जाता है।

आत्मेन्दियमनोऽर्थानां सन्निकर्षात्प्रवर्तते।व्यक्ति तदात्वे या बुद्धि प्रत्यक्षं सा निगद्यते।।

अर्थात् आत्मा, इन्द्रिय, मन तथा इन्द्रियों के विषय के सम्बन्ध के समय जो निश्चयात्मक ज्ञान उत्पन्न होता है, वही प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाता है। अथ प्रत्यक्ष–**प्रत्यक्ष नाम तदात्मनाचेन्द्रियैश्च स्वयमुपलभ्यते,**।[1] अर्थात् प्रत्यक्ष उस विषय को कहते है जो आत्मा तथा ज्ञानेन्द्रियों द्वारा स्वयम् जाना जाता है। **इन्द्रियार्थसन्निकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम्**[2] अर्थात् इन्द्रियों के सन्निकर्ष से उत्पन ज्ञान प्रत्यक्ष है। विभिन्न दर्शनाचार्यों ने प्रत्यक्ष ज्ञान को दो प्रकार का माना है– निर्विकल्पक व सविकल्पक। जब वस्तु के सभी गुण धर्म का ज्ञान न होकर, यह कोई वस्तु है, इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त होता है तब वह निर्विकल्पक ज्ञान कहलाता है। जब वस्तु का नाम, गुण आदि का ज्ञान प्राप्त होता है, उसे सविकल्पक ज्ञान कहते हैं। यह सविकल्पक ज्ञान दो प्रकार का कहागया हैं– लौकिक व अलौकिक। लौकिक ज्ञान बाह्य (श्रवण, त्वचा, चक्षु, रहना, घ्राण) व अभ्यन्तर (मानस) भेद से दो प्रकार का होता है और अलौकिक ज्ञान सामान्य लक्षण, ज्ञान लक्षण, योग भेद से तीन प्रकार का कहलाता है। इनमें योगज भी युक्त व युंजान भेद से दो प्रकार का होता है। परन्तु आयुर्वेदीय चिकित्सा के क्षेत्र में लौकिक ज्ञान के बाह्य भेद (श्रवणादि) का ही महत्त्व सर्वाधिक दृष्टिगोचर होता है।

इन्द्रियों का अवलोक– इन्द्रियाँ मानव शरीर की अत्यन्त उपयोगी अवयव हैं। सामान्यतः इन्द्रियों की संख्या ग्यारह स्वीकार की गयी हैं। इन समस्त इन्द्रियों को इनके कर्म अनुसार तीन प्रकार से विभाजित किया जाता है। 1– ज्ञानेन्द्रियाँ 2– कर्मेन्द्रियाँ 3– उभयेन्द्रिय। **ज्ञानेन्द्रिय**– इनकी संख्या पाँच हैं– श्रोत्र, त्वक, चक्षु, रसना, घ्राण। **कर्मेन्द्रिय–** ये भी संख्या में पाँच हैं– वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ, पायु। **उभयेन्द्रिय–** मन को उभयेन्द्रिय कहाँ गया है। ।

उपर्युक्त समस्त इन्द्रियों में प्रत्यक्ष ज्ञान का साधन ज्ञानेन्द्रियों को व मन को माना गया हैं। आयुर्वेद में ज्ञानेन्द्रियों के विषय, द्रव्यादि के ज्ञान हेतु पंच पंचक[18] सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है। इस सिद्धांतके अन्तर्गत पंच इन्द्रियों, पंच इन्द्रिय द्रव्यों, पंच इन्द्रियों के अधिष्ठान, पंच इन्द्रियों के विषयों, पंच इन्द्रियों की बुद्धियों का विवेचन किया गया हैं–

पाँच इन्द्रिया– तत्र चक्षु श्रोत्रंघ्राणं स्पर्शनमिति पंचेन्द्रियाणि।

पाँच इन्द्रिय द्रव्य– पञ्चेन्द्रियाणि– खं वायज्योतिरापोभूरिति।

पाँच इन्द्रिय अधिष्ठान– पञ्चेन्द्रियाधिष्ठानानि– अक्षिणीकर्णो नासिकेजिह्वात्वक्चेति।

पाँच इन्द्रिय विषय– पञ्चेन्द्रियार्थ शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः।

पाँच इन्द्रिय बुद्धि चक्षुर्बुद्धयादिकाःताःरूपुनरिन्द्रियार्थसत्त्वात्म सन्निकर्षजाः क्षणिकाः निश्चयात्मिकाश्च।

इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष– इन्द्रियों का अपने–अपने विषयों से सम्बन्ध अर्थात् आत्मा का मन से, मन का इन्द्रियों से, पंचज्ञानेन्द्रियों का उनके शब्द, स्पर्शादि विषयों से ज्ञान हेतु जो सम्बन्ध स्थापित होता हैं वह सन्निकर्ष कहलाता है। क्योंकि यह ज्ञान इंद्रियों से प्राप्त है इसलिये यह सविकल्पक ज्ञानके बाह्य भेद से सम्बंधित है। न्यायाधिकरण दर्शनों में यह सन्निकर्ष छः प्रकार का कहाँ गया है–

(1) संयोग (2) संयुक्त समवाय (3) संयुक्त समवेत समवाय (4) समवाय (5) समवेतसमवाय (6) विशेषण– विशेष्यभाव।

संयोग– चक्षुषा घटप्रत्यक्षजनने अत्र तः सन्निकर्षः स संयोग सन्निकर्षः। चक्षु का घट से संयोग होना संयोग सन्निकर्ष है।

संयुक्त समवाय–घटरूपस्यप्रत्यक्षं येन भवति स संयुक्तसमवायसन्निकर्ष। द्रव्यों में रहने वाले गुणादि से इन्द्रियों का जो संयोग होता है वह संयुक्त समवाय कहलाता है।

संयुक्त समवेत समवाय–रूपत्त्वसामान्यप्रतयक्षेसंयुक्तसमवेतसमवायसन्निकर्ष। अर्थात् चक्षु से रूपत्त्वसामान्यप्रतयक्षे जाति के प्रत्यक्ष में संयुक्त समवेत समवाय सन्निकर्ष होता है।

समवाय सन्निकर्ष– श्रोत्रेण शब्दसाक्षात्कारे समवाय सन्निकषर्रू अर्थात् श्रोत्र से शब्द के प्रत्यक्ष में समवाय सन्निकर्ष होता है।

समवेत समवाय– शब्दत्वसाक्षात्कारे समवेतसमवायःसन्निकर्षः श्रोत्रसमवेत शब्दादयास्त्विन्द्रियप्रत्यक्षाः शब्दत्त्वस्य समवायात्। अर्थात् श्रोत्र के साथ शब्दत्त्व का साक्षात्कार होने पर समवेत समवाय सन्निकर्ष होता है क्योंकि श्रोत्र के साथ समवेत हुए शब्द में शब्दत्त्व समवाय सम्बन्ध से रहता है। **विशेषण–विशेष्यभाव–** आभावप्रत्यक्षे विशेषणविशेष्यभावः सन्निकर्षः घटाभाववत् भूतलमित्यत्र चक्षुसंयुक्ते भूलतेघटाभावस्य विशेषणत्वात्। अर्थात् आभाव के प्रत्यक्ष में विशेषण विशेष्यभाव सन्निकर्ष होता है। घटाभाववत् भूतलम्अर्थात् भूतल घटाभाव युक्त है ऐसा कहने पर चक्षु जिस आभावयुक्त भू से सन्निकर्ष होता है वह भू घटा भाव वाले विशेषण से संयुक्त है। चक्षु संयुक्त भूतल विशेष्य है व घटा भाव विशेषण है।

उपर्युक्त विवेचन से भिन्न आयुर्वेद दर्शन में चिकित्सा को ध्यान में रखते हुए दो प्रकार का सन्निकर्ष बताया गया हैं। आयुर्वेद में इसे इन्द्रियार्थ संयोग के नाम से प्रतिपदित किया गया है यह इन्द्रियार्थ संयोग निम्न प्रकार है – **सात्म्य और असात्म्य–** आयुर्वेद में सात्म्य व आसात्म्य दोनो शब्दों का ही विभिन्न स्थानों पर। प्रयोग हुआ है। सात्म्य का अर्थ है –हितकारी व आसात्म्य अहितकारी अर्थ में लिया गया हैं। हालांकि आयुर्वेद में आसात्म्य इन्द्रियार्थ संयोग का वर्णन ही दृष्टिगोचर होता है। संभवतः इसका कारण केवल अहित का ज्ञान करा उसके उपचार का वर्णन करना रहा होगा। आसात्म्येन्द्रियार्थ संयोग– इन्द्रिय भेद से यह पांच प्रकार का है तथा इसके त्रिविध विकल्प हैं।

1. अतियोग 2. अयोग 3. मिथ्यायोग।

चक्षुरिन्द्रियो के अतियोगादि– अधिक आभा वाले दृश्यों को देखना नेत्रों का अतियोग है। प्रकाश का सर्वथा अभाव अयोग है तथा अत्यन्त श्लिष्ट, अधिक सूक्ष्म, विकृत पदार्थों को देखना मिथ्या योग है अर्थात् ऐसी वस्तुओं को देखने से पहले हानि होती हैं।।

श्रवणेन्द्रिय अतियोगादि– बादलों की जोरदार गर्जन, उत्कृष्ट शब्दादि को सुनना श्रोत्र का अति योग है। बिल्कुल न सुनना अयोग है तथा कठोर शब्द, लेकिन प्रिय विनाशादि सुनना मिथ्या योग हैं।

घ्राणेन्द्रिय अतियोग आदि– अति तीव्र, उग्र गन्धों को अधिक सूंधना अतियोग है। गन्ध को जरा भी न सूँधना अयोग है कि तथा सडन युक्त गन्ध, विषाक्त वायु आदि को ढूँढना मिथ्या योग है।

रसनेन्द्रिय अतियोग आदि – प्रिय रसो का अत्यधिक सेवन अतियोग है। किसी भी प्रकार का कोई स्वाद न लेना अयोग है तथा चरक विमान स्थान प्रथमाध्याय उक्त प्रकृति आदि आठ आहार विधि में राशि को छोडकर अन्य रसो से बात जीभ का संयोग से मिथ्या योग है।

त्वगिन्द्रिय अतियोग आदि– अत्यंत शीतल–उष्ण पदार्थों का स्नान व उबटन आदि में अधिक सेवन करना अतियोग है। शीतल जल से स्नान, तैल मालिश आदि का सर्वथा अभाव अयोग है तथा चोट लगना, त्वचा को कष्ट देने वाले पदार्थों की का स्पर्श करना मिथ्या योग है।

प्रमाणिकता एवं प्रासंगिकता के परिपेक्ष में दृआयुर्वेद का शाब्दिक अर्थ जीवन का विज्ञान है

आयुर्वेदीय–चिकित्सा में रोग, रोगी एवं रोग–चिकित्सा के निर्णय में प्रमाणों का आश्रय लिया जाता है। दार्शनिक दृष्टि से नहीं अपितु आतुर परीक्षा एवं रोग ज्ञान में भी प्रत्यक्ष की उपयोगिता एवं महत्व अन्य सभी प्रमाणों से अधिक है। परीक्षा के लिए मुख्य साधन इन्द्रियां हैं। इन्द्रियों के द्वारा परीक्षा का निर्देश शास्त्रों में स्पष्टतः मिलता है। यथा–

दर्शनस्पर्शनप्रश्नैः परीक्षते च रोगिनम्।।[19]

अर्थात् (वैद्य) दर्शन, स्पर्शन और प्रश्न के द्वारा रोगी की परीक्षा करे। यहां तीन प्रकार की परीक्षा करने का निर्देश आचार्यों ने दिया है। ये तीनों परीक्षाएं प्रत्यक्ष के अन्तर्गत ही सन्निहित हैं। इसी प्रकार अन्य परीक्षाएं भी इन्द्रियों के द्वारा करने का निर्देश मिलता है, इस सम्बन्ध में चरक का निम्न वचन महत्वपूर्ण है।

"प्रत्यक्षतरतु खलु रोगतत्वं बुभुत्सुः सर्वैरिन्द्रियः सर्वानिन्द्रियार्थानातुरशरीरगतान् परीक्षेत, नान्यत्र[20] **रसज्ञानात्"**। अर्थात् प्रत्यक्ष प्रमाण के द्वारा रोग ज्ञान करने की इच्छा करने वाला वैद्य रस ज्ञान को छोड़ कर शेष समस्त इन्द्रियों के द्वारा रोगी के शरीर में स्थित जानने योग्य समस्त विषयों की परीक्षा करे। आयुर्वेद के अनुसार मानव शरीर चार मूल तत्वों से निर्मित है दोष धातु मल और अग्नि इसका संतुलन जब तक बना रहता है तब तक मानव शरीर अपने आप को स्वस्थ महसूस करता है।

आयुर्वेदाचार्यो के अनुसार रोगी के ज्वर आदि की परीक्षा तथा हृदय के स्फुरण आदि का ज्ञान श्रोत्र इन्द्रिय के द्वारा, शरीर की आकृति, प्रमाण, वर्ण आदि की परीक्षा चक्षु के द्वारा, शरीर के ताप, नाड़ी स्फुरण आदि की परीक्षा स्पर्शनेन्द्रिय के द्वारा और गन्ध योग्य भावों की परीक्षा या ज्ञान घ्राणेन्द्रिय के द्वारा करना चाहिये। इन चारों इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त ज्ञान प्रत्यक्ष के अन्तर्गत आता है। प्रत्यक्ष के अभाव में शरीरगत किसी भी अवयव या भाव की परीक्षा होना सम्भव नहीं है। आयुर्वेद में अन्यत्र रोगी की अष्टविध परीक्षा का निर्देश दिया गया है। यथा–

रोगाक्रान्तशरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत्।
नाड़ी मूत्रं मलं जिह्वां शब्दं स्पर्श दृगाकृती।।[21]

अर्थात् मनुष्य के रोगाक्रान्त शरीर के निम्न आठ स्थानों (भावों) की परीक्षा करना चाहिये––१. नाड़ी, २. मूत्र, ३. मल, (पुरीष), ४. जिह्वा, ५. शब्द, ६. स्पर्श, ७. दृष्टि और ८. आकृति। इन समस्त भावों की परीक्षा इन्द्रियों के द्वारा ही सम्भव है। इन्द्रियों के द्वारा होने वाला ज्ञान प्रत्यक्ष के अन्तर्गत ही आता है। अतः आयुर्वेद में प्रत्यक्ष की उपयोगिता सुस्पष्ट है।

इसी प्रकार रोगी की चिकित्सा के लिए भी प्रत्यक्ष की उपयोगिता है। आयुर्वेद के अन्य विषयों जैसे अगद तन्त्र, कौमार भृत्य, प्रसूति तंत्र, रस–शास्त्रभैषज्य कल्पना, शल्य–शालाक्य तंत्र

आदि में भी प्रत्यक्ष के बिना काम चलने वाला नहीं है। अतः प्रत्यक्ष को अनिवार्य माना गया है। आयुर्वेदीय औषधि निर्माण शास्त्र की समस्त प्रक्रियाएं प्रत्यक्ष के अभाव में अपूर्ण ही रह जायेंगी।

निष्कर्ष– श्रेष्ठ भारत के उत्थान एवं आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली को बढ़ावा देने और स्वस्थ एवं कल्याणकारी निरोगित समाज विकसित करने के लिए उपरोक्त विश्लेषण उपरांत कहा जा सकता है कि उपयोगिता एवं प्रासंगिकता की दृष्टि से प्रत्यक्ष प्रमाणको आयुर्वेद में रोगी व रोग की परीक्षा के परिपेक्ष्य में अन्य प्रमाणों की अपेक्षा विस्तृत क्षेत्र प्राप्त है क्योकि अन्य प्रमाण किसी न किसी रूप में इसी पर आधारित हैद्यवर्तमान समय में भारत सरकार द्वारा आयुर्वेद के क्षेत्र में व्यापक सुधार अवसर के बढ़ावा दिए जा रहे हैं आयुर्वेद को बढ़ावा देने के लिए व्यापक स्तर पर राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार के माध्यम से इसकी उपयोगिता को वैश्विक पटल पर लाने की नितांत आवश्यकता है जिससे आयुर्वेद को राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर बढ़ावा मिल सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. चरकसंहिता, (सूत्र.स्था.१.४१)
2. चरकसंहिता, चक्र.टीका, (विमा. स्था. ८.७)
3. प्रमाण.समु.,टीका पृष्ठ ११
4. तर्कसंग्रह
5. वैशेषिकसूत्र (६.२.१२)
6. न्यायवृति
7. वात्स्यायन भाष्य
8. भारतीय दर्शन, पृष्ठ १७
9. दृष्टमनुमानमाप्तवचनं च सर्वप्रमाणसिद्धत्वात्द्य
10. त्रिविधं प्रमाणमिष्टं प्रमेयसिद्धिःप्रमाणाद्धिः संख्यकारिका, ४
11. भारतीय दर्शन, पृष्ठ ३०
12. तर्कसंग्रह
13. चरकसंहिता, सूत्र.स्था. ८.३–१२
14. द्विविधमेव खलु सर्वम् सच्चासच्च,तस्य चतुर्विध परीक्षा आप्तोपदेशरू,प्रत्यक्षम ,अनुमानं, युक्तिश्च चरकसंहिता, (सूत्र.स्था. ११.१७)
15. षड्विधो हि रोगानां विज्ञानोपायरूद्य तद्यथा दृपंचभिरू श्रोत्रादिभिरूप्रश्नेन चेति सुश्रुतसंहिता, (सूत्र.स्था. १०.४)
16. दर्शनस्पर्शनप्रश्नैरू परीक्षते च रोगिनम् अष्टांग. (सूत्र.स्था. १.२२)
17. प्रशस्तपाद भाष्य
18. चरकसंहिता, विमा. स्था. ४.४
19. अष्टांग. (सूत्र.स्था. १.२२)
20. चरक संहिता, विमान स्थान ४७
21. योग रत्नाकर

उत्तर भारत और दक्षिण भारत के मंदिर वास्तु का तुलनात्मक अध्ययन – मंदिर स्थापत्य

ईशा मौर्या
डॉ0 कामना शुक्ला

कृपालु महिला महाविद्यालय,
कुण्डा प्रतापगढ़

भारतीय मंदिरों का आविर्भाव अचानक नहीं हुआ, अपितु इसके पीछे एक सुदीर्घ परम्परा दिखाई देती है। मंदिर निर्माण की प्रक्रिया का आरम्भ तो मौर्य काल से ही शुरू हो गया था, किन्तु आगे चलकर उसमें सुधार होता गया और गुप्तकाल को संरचनात्मक मंदिरों की विशेषता से पूर्ण देखा जाता है।

अति प्राचीन काल में मंदिर वेदी के रूप में खुले आकाश के नीचे बनाये जाते थे, जिसे 'चौरण' कहा जाता था। इसके ऊपर देव प्रतीक रखकर पूजा–अर्चना की जाती थी। मंदिर निर्माण के दूसरे चरण में वेदी के चारों ओर बाड़ बनाने की प्रथा प्रारम्भ हुई, इसे 'प्राकार' कहा गया। पहले यह बांस या लकडी का बनता था, जिसे अंततः पाषाण का बनाया जाने लगा। गुप्त काल से बने मंदिरों की निम्नलिखित कमियाँ थी –

- इनका आधार छोटा था।
- गर्भ–गृह तक पहुँचने के लिये सीढ़ियाँ नहीं थी।
- छतें सपाट थी, जिस कारण वर्षा जल के निकास की समस्या थी।
- ये आकार में बेहद छोटे होते थे।
- अलग से काई प्रदक्षिणा–पथ नहीं था।

प्राचीनतम मंदिर संरचना–

स्थापत्य के विकास की दृष्टि से गुप्तकाल को प्राचीन भारत के इतिहास का 'स्वर्ण युग' कहा जाता है। देश की आर्थिक संवृद्धि तथा राजनैतिक स्थिरता के परिणाम स्वरूप स्थापत्य के क्षेत्र में इस काल में चहुँमुखी विकास हुआ। दुर्भाग्य से वास्तुकला के क्षेत्र में गुप्तकाल की उपलब्धियों के अधिकाधिक अवशेष प्राप्त नहीं हो सके। बहुधा यह कहा जाता है कि आगे मुसलमानों की मूर्तिभंजक नीति के परिणामस्वरूप अधिकांश स्थापत्य नष्ट हो गये होगें। इसके साथ ही दूसरा तथ्य यह हो सकता है कि गुप्तकाल के मंदिर अप्रभावी पूजा स्थल थे, जो

आवासिक वास्तुकला में खो गये या फिर आने वाली सदी में उनका पुर्ननिर्माण किया गया। फिर भी यह सत्य है कि गुप्तकाल संरचनात्मक मंदिरों की कुछ सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार है–

- मंदिरों का निर्माण ऊँचे चबूतरों पर होता था।
- मंदिरों के चबूतरों तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनाई जाती थी।
- मंदिर के भीतर एक चौकोर अथवा वर्गाकार कक्ष बनाया जाता था जिसमें मूर्ति रखी जाती थी, इसे 'गर्भगृह' कहते थे।
- गर्भगृह के चारों ओर प्रदक्षिणा –पथ बना होता है।
- मंदिरों की सपाट छत पर शिखर बनाने की शुरूआत हुई।

नागर शैली–

उत्तर तथा दक्षिण की पूजा विधि के अंतर से मंदिर वास्तु में भी अंतर बना है। पहले के मंदिर में गणेश, स्कंद, गज आदि गौण देवताओं को केवल वास्तु के सौंदर्यवर्धन हेतु उकेरा जाता था। पर अब इनकी महत्ता बढ़ने से इनके भी मंदिर बनने लगे।

मंदिर स्थापत्य की इस शैली का विकास हिमालय से लेकर विन्ध्य क्षेत्र तक हुआ। नागर स्थापत्य के मंदिर मुख्यतः नीचे से ऊपर तक आयताकार रूप में निर्मित होते है। उत्तर भारतीय मंदिर शैली में मंदिर एक वर्गाकार गर्भगृह स्तम्भों वाला मंडप तथा गर्भगृह के ऊपर एकरेखीय शिखर से संयोजित होता है। कभी –कभी वह पंचायतन प्रकार के होते है, जिसमें एक जगती के ऊपर मध्य में मुख्य मंदिर होता है और उसके चारों कोनों पर चार छोटे देवालय होते है। मंदिर एक ऊँचे चबूतरे पर स्थापित होता है, जिसे 'जगती' कहते हैं तथा जिस पर जाने के लिए कभी –कभी तीनों ओर से सीढ़ियाँ बनीं होती है।

नागर शैली में बने मंदिरों के गर्भगृह के ऊपर एकरेखीय शिखर होता है। यह प्रायः तीन उभारों से संयोजित होता है, जिसमें सबसे मध्य के उभार को 'भद्ररथ' कहते है तथा सबसे किनारे वाले उभार को 'कर्नरथ' कहा जाता है। भद्ररथ तथा कर्नरथ के मध्य के उभार के 'प्रतिरथ' की संज्ञा दी जाती है। विकास क्रम में धीरे–धीरे शिखर पर तीन, पाँच, सात, तथा नौ उभारों को बनाया गया। शिखर का सबसे महत्वपूर्ण भाग सबसे ऊपर लगा आमलक होता है, जो उत्तरी भारत के मेदिरों की मुख्य पहचान है।

नागर स्थापत्य की विशेषताएँः

- नागर शैली में शिखर अपनी ऊँचाई के क्रम में ऊपर की ओर पतला होता जाता है।
- मंदिर में सभा भवन और प्रदक्षिणा–पथ भी होता है।
- शिखर के नियोजन में बाहरी रूपरेखा बड़ी स्पष्ट तथा प्रभावशाली ढंग से उभरती है। अतः इसे रेखा शिखर भी कहते है।
- शिखर आमलक की स्थापना होती है।

- वर्गाकार तथा ऊपर की ओर वक्र होते इसकी विशेषता है।

नागर शैली के मंदिर की संरचना–

मंदिर की तुलना मानव शरीर के विभिन्न अंगों से की गई, क्योंकि नागर शैली में ऐसा अवयव दृष्टिगोचर होता है। आदर्श मानव शरीर की संरचना के समान मंदिर की संरचना पर बल दिया गया। इसे निम्न बिन्दुओं के आधार पर देखा जा सकता है।

- मानव शरीर का सारा भार जिस अंग पर टिका होता है, वह पैर है। इसी प्रकार संपूर्ण मंदिर का भार जिस पर रहता है, उसे 'पाद–अधिष्ठान' या 'जगती पीठ' कहते है। इसे सामान्य भाषा में 'चबूतरा' कहते है, जो कि कुछ ऊँचाई पर होता है।
- शरीर के अन्यतम भीतर गुप्त क्षेत्र 'कटि प्रदेश' कहते है। इसी प्रकार मंदिर का अन्यतम भीतरी गुप्त क्षेत्र 'गर्भगृह' कहलाता है।
- कमर के ऊपर शरीर के आंतरिक विस्तृत क्षेत्र को 'उदर' कहते है। मेदिर के आंतरिक विस्तृत क्षेत्र को 'विमान' कहते है।
- शरीर का बाह्य विस्तृत क्षेत्र स्कंद वक्ष है और मंदिर के बाहय विस्तृत क्षेत्र को शिखर कहते है
- शरीर के ऊपरी गोलाई लिये हुए भाग को गर्दन कहते है मंदिर का ऊपरी गोलाई वाला भाग ग्रीवा या शुकनासिका है
- शरीर का सबसे ऊपरी हिसां सिर है वैसे ही मंदिर का सबसे ऊपरी हिस्सा आमलक स्तूप है।

तकनीक के आधार पर यदि देखा जाए तो उठता हुआ विमान तल और शिखरनुमा छत का समन्बय ही नागर शैली की मुख्य पहचान या विशेषया है।

नागर शैली की उप–शैलियाँ–

नागर शैली सम्पूर्ण उत्तर भारत पर प्रभावी रही, इसलिए उत्तर भारत के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों की अपनी स्थानीय विशेषता के साथ उसकी उप–शैलियाँ भी उभरती गई जैसे–

- उड़िया उपशैली–ओडिशा में
- अंतर्वेदी उपशैली–उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली
- खुजराहों उपशैली–मध्यप्रदेश
- चालुक्य/ सोलंकी उपशैली– गुजरात एवं दक्षिण राजस्थान
- कश्मीरी उपशैली– कश्मीर में।

क्षेत्रीय शैलियों में बने मंदिरों को ओडिशा में 'कलिंग' गुजरात में 'लाट' और हिमालयी क्षेत्र में पर्वतीय कहा गया।

भीतर गाँव का विष्णु मंदिर–

विष्णु का प्राचीनतम खड़ा हुआ ईंट का हिन्दू मंदिर (गुप्तकालीन)

कानपुर जिला में कानपुर नगर से लगभग दक्षिण में भीतरगाँव स्थित है जहाँ गुप्तकालीन एक भव्य मंदिर है। यहाँ इटों का प्राचीनतम शिखर युक्त मंदिर एक ऊचें चबूतरे (जगती पीठ) पर निर्मित है। इसकी तीन ओर की बाहरी दीवरों के बीच में आगे की ओर निकली हुई है। पूर्व की ओर (सामने) जाने की सीढ़ियाँ और द्वार है, द्वार के भीतर मंडप है और फिर उसके आगे गर्भ गृह में जाने का द्वार है। गर्भ गृह के ऊपर एक कमरा है मन्दिर की छत शुण्डाकार है। इसकी बहरी दीवारो को देवी–देवताओ की मूर्तियो से सजाया गया है। मन्दिर का शिखर पिरामिड के आकार का है। शिखर पर चारो तरफ चैत्य की चित्रकारी की गई है।

प्रो0 कृष्ण दत्त बाजपेयी के अनुसार "मन्दिर के निर्माण में सादगिय होते हुए भी वस्तुगत अनेक नवीनताएँ है, जो गुप्त युग के अरम्भिक मन्दिर में नही है।"

देवगढ़ का दशावतार मन्दिर–

ललितपुर जिला में बेंतवाँ नदी के तट पर स्थित देवगढ़ में एक ध्वस्त विष्णु मन्दिर है। इसमें अंतशयी विष्णु की प्रतिमा है। मन्दिर की जगती पीठ ऊँचे चबूतरे पर है। चबूतरे के चारो ओर साढ़े पन्द्रह फुट लम्बी सीढ़ियाँ है। ताराश कर उत्कीर्ण किये गये पाषाण खण्ड़ो द्वारा निर्मित इस मन्दिर में गुप्तकालीन मन्दिर स्थापत्य अपने चर्मोत्कर्ष पर दिखायी देता है। टुटी–फूटी अवस्था में होते हुये भी यह मन्दिर अपनी वस्तविकता को परिलक्षित करता है।

यह मन्दिर डेढ़ मीटर ऊँचे अधिष्ठान पर निर्मित है। यहाँ पर शेषशायी विष्णु तथा गजेन्द्र मोक्ष के चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसके ऊपर बना हुआ मंडप प्रायः मूर्ति फलको को सुरक्षा प्रदान करने के लिए निर्मित किया गया था।

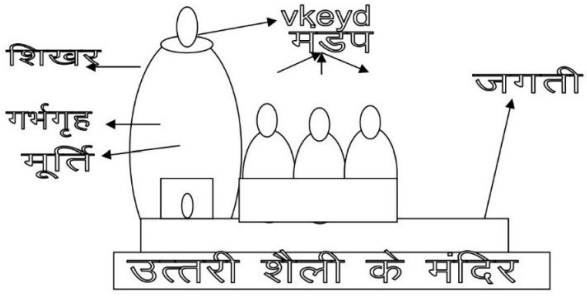

देवगढ़ का दशावतार मंदिर

<u>द्रविड़ शैली–</u>

- 7वीं शताब्दी में द्रविड़ शैली की शुरूआत हुई, परंतु इसका विकसित रू॰ आठवीं शताब्दी से देखने को मिला और सुदूर दक्षिण भारत में इसकी दीर्घकालिकता 18वीं शताब्दी तक बनी रही।
- कृष्णा नदी से लेकर कन्याकुमारी तक द्रविड शैली के मंदिर पाए जाते है।

- द्रविड मंदिर का निचला भाग वर्गाकार और मस्तक गुबंदाकार, 6 या 8 पहलुओं वाला होता है।
- द्रविड शैली की पहचान सम्बंधी विशेषताऐं– प्रकार (चहारदीवारी),गोपुरम (प्रवेश द्वार), वर्गाकार गर्भ–गृह (रथ), पिरामिडनुमा शिखर, मंडप (नंदी मंडप) विशाल संकेद्रित प्रांगण तथा अष्टकोणीय मंदिर संरचना शामिल है।
- पल्लवों ने द्रविड शैली को जन्म दिया, चोल काल में इसमे ऊँचाइयाँ हासिल की तथा विजयनगर काल के बाद में इसमें हास आया।
- चोल काल में द्रविड शैली की वास्तुकला में मूर्तिकला और चित्रकला का संगम हो गया।
- यूनेस्को की विश्व विरासत सूची में शामिल तंजौर का वृहदेश्वर मंदिर (चोल शासक राजराज प्रथम द्वारा निर्मित) 1000 वर्षो में द्रविड शैली का जीता–जागता उदाहरण है।
- द्रविड शैली के अंतर्गत ही आगे नायक शैली का विकास हुआ जिसके उदाहरण है– मीनाक्षी मंदिर (मदुरै), रंगनाथ मंदिर (श्रीरंगम, तमिलनाडु), रामेश्वरम् मंदिर आदि।

पल्लव कालीन स्थापत्य कला

- पल्लव काल के विकास की शैलियों को क्रमशः–
  1. महेन्द्र शैली (610–640ई0) मामल्ल शैली (640–674ई0)
  2. राजसिंह शैली (674–800ई0) नंदिवर्मन–अपराजित वर्मन शैली (8वीं–9वीं शताब्दी) में देखा जा सकता है।
- पल्लव शासक महेन्द्र वर्मन के समय वास्तुकला में 'मंडप' निर्माण प्रारम्भ हुआ।
- राजा नरसिंहवर्मन ने चिंगलपेट में समुद्र किनारे महाबलीपुरम नामक नगर की स्थापना की और 'रथ ' निर्माण का शुभारंभ किया।
- पल्लव काल में रथ या मंडप दोनों ही प्रस्तर काटकर बनाये जाते थे।
- पल्लव कालीन आादि–वराह, महिषामर्दिनी, पंचपांडव, रामानुज आदि मंडप विशेष प्रसिद्ध है।
- 'रथ मंदिर' मूर्तिकला का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करते है, जिनमें धर्मराज रथ, द्रौपदी रथ, नकुल–सहदेव रथ, अर्जुन रथ, भीम रथ, गणेश रथ, पिंडारि रथ तथा वलैयंकुट्टै प्रमुख है।
- इन आठ रथों में द्रौपदी रथ एक मंजिला और छोटा है, बाकी सातों रथों कों 'सप्तपैगोडा' कहा गया।
- पल्लव काल की अंतिम एवं महत्वपूर्ण 'राजसिंह शैली' में रॉक कट आर्किटेक्चर (शैली कर्त्तन)के स्थान पर पत्थर, ईंट आदि से मंदिर का निर्माण शुरू हुआ।
- राजसिंह शैली के उदाहरण महाबलीपुरम के तटीय मंदिर, अर्काट का पनमलाई मंदिर, काँची के कैलाशनाथ और बैकुंठ पेरूमल का मंदिर आदि है।

- बैकुंठ पेरूमल मंदिर में भगवान विष्णु की मूर्तियों के साथ–साथ दीवारों पर युद्ध राज्याभिषेक, अश्वमेध, नगर जीवन आदि के दृश्यों को भी अत्यंत सजीवता एवं कलात्मकता के साथ उत्कीर्ण किया गया है।
- पल्लव काल के नंदिवर्मन–अपराजितवर्मन शैली में संरचनात्मक मंदिर निर्माण की शुरूआत हुई और दक्षिण भारत में एक स्वतंत्र शैली उभरी, जिसे 'द्रविड़ शैली' कहा गया।

महाबलीपुरम् के रथ मंदिर (तमिलनाडु)–

यहां देवताओं की शोभायात्रा निकालने की पुरानी परंपरा रही है। इसमें रथ पर देव मूर्तियों को बिठाकर उनकी शोभायात्रा निकाली जाती थी। इसी परिकल्पना को साकार रूप पल्लव शासक नरसिंह वर्मन महामल्ल ने वास्तु में दिया। इन मंदिरों का निर्माण नरसिंह वर्मन द्वारा 630 ई–658 ई के बीच मद्रास से 32 मिल दक्षिण समुद्र तट पर चिंगलपेट में हुआ था। इसलिए इन्हें महाबलीपुरम का रथ मंदिर भी कहते हैं।

यह रथ मंदिर पर्वत को काटकर बनाए गए हैं इनकी संख्या आठ है उनके नाम निम्न हैः–

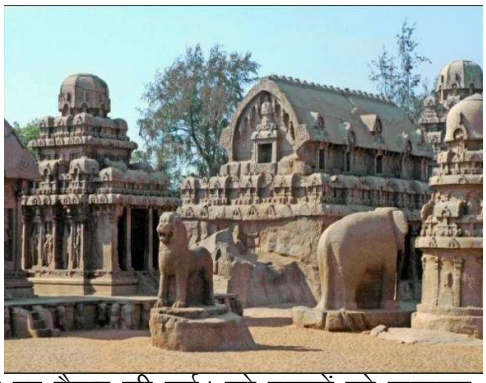

1. धर्मराज
2. भीम
3. अर्जुन
4. सहदेव
5. गणेश
6. द्रौपदी
7. पिंडारी
8. वलैयकुट्टै

उनकी योजना प्राचीन गुफा व बिहार की शैली पर तैयार की गई। जो पहाड़ों को काटकर बनाए गए थे। यह प्राचीन काष्ठकला, घास–फूस, के बने छप्पर तथा लकड़ी की बल्लियों के अनुकरण पर एक ही पत्थर के टुकड़े को काटकर बनाए गए।

ये मंदिर एकाश्मक रथ कहे जाते हैं। यह आग्नेय चट्टान से निर्मित हैं।

कांजीवरम का बैकुंठ पेरूमल मंदिर (तमिलनाडु)

पल्लवों के अधिकांश मंदिर शैव धर्म से संबंधित है। यह उन मंदिरों में से एक है, जो थोड़े बहुत वैष्णो मंदिर से संबंधित हैं। यह एक विशालकाय मंदिर है। इसका गर्भ गृह तीन मंजिला है। नीचे के गर्भ गृह में चतुर्भुजी विष्णु की शयनस्थ मूर्ति है। इसकी ऊपरी महिला निचली मंजिला से कुछ छोटी है। यह कक्ष मूर्ति रहित है।

इस मंदिर में महामंडपम मुख्य मंदिर का अंग है। मंदिर के सामने एक बरामदा है। यह स्तंभ युक्त बरामदा एक नया रूप है जो न केवल वास्तुकला में परिवर्तन का सूचक है मंदिर पूजा की पद्धति में विकास का भी सूचक है उत्तर तथा दक्षिण की पूजा विधि के

अंतर से मंदिर वास्तु में भी अंतर बना है। पहले के मंदिर में गणेश, स्कंद, गज आदि गौण देवताओं को केवल वास्तु के सौंदर्य वर्धन हेतु उकेरा जाता था। पर अब इनकी महत्ता बढ़ने से इनके भी मंदिर बनने लगे। अलग–अलग संप्रदाय के रूप में इनका विकास हुआ विष्णु मंदिर के ऊपरी छज्जे पर गरुड़ की आकृति उकेरी गई। अर्द्ध स्तंभ से मंदिर की बाहरी दीवार अलंकृत है। इस प्रकार यह मंदिर इस कल का विशिष्ट मंदिर रहा है।

वैकुण्ठ पेरूमल मंदिर का गोपुर

वैकुण्ठ पेरूमल मंदिर – कांचीपुरम

चोल कालीन स्थापत्य–

- द्रविड़ वास्तु कला या वास्तु शैली का जो प्रारंभ पल्लव काल में हुआ था उसका चरमोत्कर्ष चोल काल में देखने को मिला। इस काल को दक्षिण भारतीय कला का स्वर्ण युग कहा जा सकता है।
- चोल शासको ने द्रविड़ शैली के अंतर्गत ईंटों की जगह पत्थरों और शिलाओं का प्रयोग कर ऐसे–ऐसे मंदिर बनाये जिनका अनुकरण पड़ोसी राज्यों एवं देशों तक किया।
- चोल इतिहास के प्रथम चरण (विजयालय से लेकर उत्तम चोल) में नंगावरम का श्री सुंदरेश्वर मंदिर, कन्नूर का बाल सुब्रह्मण्यम मंदिर, नरतमालै का विजयालय, चोलेश्वर मंदिर, कुंबकोनम का नागेश्वर मंदिर तथा कदंबर मलाई आदि का निर्माण हुआ।
- महान चोलों (राजराज प्रथम से कुलोतुंग तृतीय तक) के दौरान में तंजावुर में बृहदेश्वर मंदिर का निर्माण हुआ जिसे द्रविड़ शैली का सर्वोत्तम नमूना माना जा सकता है। गंगेकोंड चोलपुरम का शिव मंदिर (राजेंद्र प्रथम) ख्याति प्राप्त है।
- इन दोनों के अलावा दारापुरम का एरावतेश्वर और त्रिभुवन का कंपारेश्वर मंदिर की सुंदर एवं भव्य है।
- चोल स्थापत्य की सबसे बड़ी खासियत है कि उन्होंने वास्तुकला में मूर्ति कला और चित्रकला का भी बेजोड़ संगम किया।
- चोल युगीन मूर्तियों में नटराज की कांस्य से प्रतिमा सर्वोत्कृष्ट है।

बृहदेश्वर मंदिर :–

तंजावुर स्थित प्रसिद्ध शैव मंदिर जिसे बृहदेश्वर और दक्षिण में मेरु के नाम से जाना जाता है। चोल सम्राट राजराज 985–1012 ई की महानतम रचना है। स्थापत्य कला की दृष्टि से यह

सर्वाधिक महत्वाकांक्षी संरचना का मंदिर है। जो ग्रेनाइट से बना हुआ है। दक्षिण भारत में स्थापत्य कला के विकास में इस मंदिर को एक युगांतकारी घटना माना गया है और इसके विमान को समग्र रूप से भारतीय स्थापत्य कला की कसौटी माना गया है।

यह मंदिर 240.9 मीटर लंबी पूर्व पश्चिम तथा 122 मीटर चौड़ी उत्तर दक्षिण विशाल आंतरिक प्राकार के भीतर स्थित है। इसमें पूर्व में एक गोपुरम तथा तीन अन्य साधारण तोरण प्रवेश द्वार है जिनमें से एक–एक पृथक दिशाओं में और तीसरा पीछे की ओर है यह प्राकार परिवलयों सहित एक दो मंजिली मालिका द्वार घिरा हुआ है यह मंदिर अपने विशालकाय अनुपात डिजाइन की सादगी के चलते भवन निर्माण कला में न केवल दक्षिण भारत बल्कि दक्षिण पूर्व एशिया में भावी डिजाइनों के लिए प्रेरणा स्रोत बना।

इसका शिकार गुमटीदार गुंबद के रूप में है। जो की अष्टकोणीय है। भव्य उपपीठ अधिष्ठान अर्थ महामुख मंडपों जैसी अच्छी रूप से निर्मित समस्त इमारतें सामान्य रूप से मुख्य पूजा स्थल से जुड़ी हैं। दीवार में बने आलों और भीतरी मार्गों में दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती और शिव के भिक्षाटन वीरभद्र कालांतक नरेश अर्धनारीश्वर और आलिंगन रूपों की आदमकद चित्रात्मक प्रतिमाएं मौजूद हैं भीतर की ओर निकले प्रदक्षिणा पथ की दीवारों पर भित्ति चित्र है। जो चोल तथा उसके बाद की अवधि के सर्वोत्तम नमूने हैं जिनमें पौराणिक दृश्यों सहित समकालीन दृश्यों को भी चित्रित किया गया है। सन 1987 में इस विश्व विरासत सूची में शामिल किया गया।

बृहदीश्वर मन्दिर

स्नातक स्तर के विद्यार्थियों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

डॉ0 मुकेश कुमार सिंह

सहांयक आर्चाय
डीडीयू गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर

सारांश

इतिहास इस बात का साक्षी है कि शिक्षित युवाओं के विचारों के प्रभाव से अनेक परिवर्तन हुए तथा जिन्होंने उस समाज या देश की नई कहानी लिख दी। आज प्रत्येक राष्ट्र–राज्य अपने को वैश्वीकरण की धारा में सबसे आगे बढने का प्रयास कर रहा है। इस प्रयास की सफलता बहुत कुछ राज्य या राष्ट्र के भविष्य कहे जाने वाले विद्यार्थियों पर निर्भर करती है। आज आवश्यकता है यह पता लगाने कीसमाज का विद्यार्थी परिवर्तन को किस रूप में देखता है? क्या छात्र और छात्राएँ दोनों ही वैश्वीकरण के प्रति समान अभिवृत्ति प्रदर्शित करते है? क्या उनके विचार उनके अध्ययन वर्ग से प्रभावित होते है? क्या अभिवृत्ति शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र प्रभावित होती है। क्या इस पर समुदाय एवं जाति का प्रभाव पड़ता है? यदि इन प्रश्नों का उत्तर मिल जाय तो समाज के विकास की दिशा तय की जा सकेगी।

महत्वपूर्ण शब्दावली – वैश्वीकरण ,परास्नातक स्तर,

पृष्ठभूमि

आज संसार भर में वैश्वीकरण का नारा गूंज रहा है। प्रत्येक विकसित विकासशील तथा पिछड़े देश वैश्वीकरण की इस प्रक्रिया को अपनाकर अपना सामाजिक,आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक विकास तीव्रतम गति से करने के लिए तत्पर हैं। भारत में भी विकास के सभी क्षेत्रों में विश्वव्यापीकरण के सतत् प्रयास हुए हैं। किसी भी समाज में उपस्थित लोगों की मनोवृत्ति ही वह कारक है, जो समाज की दशा एवं दिशा तय करती हैं। शिक्षित युवा वर्ग तो किसी भी समाज या देश की रीढ़ हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि शिक्षित युवाओं के विचारों के प्रभाव से अनेक परिवर्तन हुए तथा जिन्होंने उस समाज या देश की नई कहानी लिख दी। आज प्रत्येक राष्ट्र–राज्य अपने को वैश्वीकरण की धारा में सबसे आगे बहने का प्रयास कर रहा है। इस प्रयास की सफलता बहुत कुछ राज्य या राष्ट्र के भविष्य कहे जाने वाले विद्यार्थियों पर निर्भर करती है। आज आवश्यकता है यह पता लगाने कीसमाज का विद्यार्थी परिवर्तन को किस रूप में देखता है ? क्या छात्र और छात्राएँ दोनों ही वैश्वीकरण के प्रति समान अभिवृत्ति प्रदर्शित करते है ? क्या उनके विचार उनके अध्ययन वर्ग से प्रभावित होते है ? क्या अभिवृत्ति शहरी एवं ग्रामीण

क्षेत्र प्रभावित होती है। क्या इस पर समुदाय एवं जाति का प्रभाव पड़ता है ? यदि इन प्रश्नों का उत्तर मिल जाय तो समाज के विकास की दिशा तय की जा सकेगी, क्योंकि विद्यार्थियों की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति के अध्ययन के उपरान्त आवश्कतानुसार शिक्षा द्वारा उसका परिमार्जन किया जाय सकेगा तथा शिक्षा के सहयोग से विचारों, मूल्यों, अभिवृत्तियों को गतिशील बनाकर वैश्वीकरण का मार्ग प्रशस्त करते हुए एक समय सापेक्ष समाज का निर्माण किया जा सकेगा। अतः कहा जा सकता है कि प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता अपरिहार्य है।

अध्ययन का उद्देश्य –

इस अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1–स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्रों तथा कला वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

2– स्नातक स्तर के विज्ञान तथा कला वर्ग के छात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

3– स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्र तथा कला वर्ग की छात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

4–स्नातक स्तर के विज्ञान छात्राओं तथा कला वर्ग के छात्र का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

आज प्रत्येक राष्ट्र–राज्य अपने को वैश्वीकरण की धारा में सबसे आगे बढने का प्रयास कर रहा है। इस प्रयास की सफलता बहुत कुछ राज्य या राष्ट्र के भविष्य कहे जाने वाले विद्यार्थियों पर निर्भर करती है। आज आवश्यकता है यह पता लगाने की समाज का विद्यार्थी परिवर्तन को किस रूप में देखता है शिक्षित युवा वर्ग तो किसी भी समाज या देश की रीढ़ हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि शिक्षित युवाओं के विचारों के प्रभाव से अनेक परिवर्तन हुए तथा जिन्होंने उस समाज या देश की नई कहानी लिख दी।

परिकल्पना –

प्रस्तुत अध्ययन में अधोलिखित परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया है दृ

1. स्नातक स्तर के विज्ञान तथा कला वर्ग के छात्रों की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

2. स्नातक स्तर के विज्ञान तथा कलावर्ग के छात्राओं की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

3–स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्र तथा कला वर्ग की छात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

4– स्नातक स्तर के विज्ञान छात्राओं तथा कला वर्ग के छात्र का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि–

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का चयन परास्नातक स्तर के विद्यार्थियों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करने के लिए किया गया है।

प्रस्तुत शोध कार्य में दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर के कला एवं विज्ञान वर्ग के स्नातक स्तर के 50–50 छात्र एवं छात्राओं को चयनित किया गया है।

प्रयुक्तशोध उपकरण– शोधकर्ता ने अध्ययन विधि के निश्चय के पश्चात् समस्याओ के समाधान लिए वैश्वीकरण अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया है जिसे डॉ० नन्दूलाल एवं कुमार यादव नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय प्रयागराज के द्वारा तैयार किया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण–सर्वप्रथम परास्नातक स्तर के विज्ञान तथा कला वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति के मध्यमान, मानक विचलन व क्रान्तिक अनुपात को तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 1

स्नातक स्तर के विज्ञान तथा कला वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति के मध्यमान, मानक विचलन व क्रान्तिक अनुपात की तालिका–

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	डी० एफ०	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
कला वर्ग के छात्र	50	1780	17.6	98	2.04	0.05 स्तर पर अन्तर सार्थक है।
विज्ञान वर्ग के छात्र	50	184.3	14.5			

उपरोक्त तालिका से यह प्रतीत हो रहा है कि कला वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 178.9 व मानक विचलन 17.6 है एवं विज्ञान वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 184.3 व मानक विचलन 14.5 है। इन दोनों समूहों के बीच क्रान्तिक अनुपात का मान 2.04 है जो कि डी०एफ० 98 पर सार्थकता स्तर 0.05 पर सारिणी मान (1.97) से अधिक है, अतःपरिगणित क्रान्तिक अनुपात का मान 0.05 स्तर पर सार्थक है।

उपरोक्त तालिका के व्याख्या एवं विश्लेषण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत अध्ययन की शून्य परिकल्पना कि स्नातक स्तर के कला वर्ग एवं विज्ञान वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नही है। 0.05 सार्थकता स्तर पर अस्वीकृत होती है।

तालिका 2

स्नातक स्तर के विज्ञान तथा कला वर्ग के छात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति के मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात की तालिका–

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	डी० एफ०	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
विज्ञान वर्ग की छात्राएँ	50	184.3	21	98	1.00	0.05 स्तर पर अन्तर असार्थक है।
कला वर्ग की छात्राएँ	50	179.9	24.5			

तालिका के सांख्यिकीय विश्लेषण से स्पष्ट है कि विज्ञान वर्ग कीछात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 184.3 व मानक विचलन 21 है एवं कला वर्ग की छात्राओं का मध्यमान 179.9 व मानक विचलन 24.5 है। इनका क्रान्तिक अनुपात का मान 1.00 है जो कि डी0एफ0 98 पर सार्थकता स्तर 0.05 पर सारिणी मान (1.97) से कम है अतः परिगणित क्रान्तिक अनुपात का मान 0.05 स्तर पर असार्थक है।

अतः शून्य परिकल्पना कि, स्नातक स्तर के विज्ञान तथा कला वर्ग के छात्राओं में वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।ꣻ 0.05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत होती है।

<u>तालिका 3</u>

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	डी० एफ०	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
विज्ञान वर्ग के छात्र	50	184.3	14.5	98	1.08	0.05 स्तर पर अन्तर असार्थक है।
कला वर्ग की छात्राएँ	50	179.9	24.5			

उपरोक्त तालिका को देखने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 184.3 व मानक विचलन 14.5 है तथा कला वर्ग की छात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 179.9 व मानक विचलन 24.5 है और इन दोनों समूहों के बीच क्रान्तिक अनुपात का मान 1.08 है, जो कि डी०एफ 98 पर सार्थकता स्तर 0.05 पर सारिणी मान (197) से कम है। अतः सी०आर० का मान 0.05 स्तर पर असार्थक है।

अतः प्रस्तुत अध्ययन की शून्य परिकल्पना कि स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्र तथा कला वर्ग की छात्राओं में वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' 0.05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत होती है।

तालिका 4

कला वर्ग के छात्र तथा विज्ञान वर्ग के छात्राओं की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति के मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात की तालिका—

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	डी० एफ०	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
कला वर्ग के छात्र	50	178.9	17.6	98	1.39	0.05 स्तर पर अन्तर असार्थक है।
विज्ञान वर्ग की छात्राएँ	50	184.3	21			

तालिका का अध्ययन करने से स्पष्ट हो रहा है कि कला वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 178.9 व मानक विचलन 17.6है, तथा विज्ञान वर्ग के छात्राओं की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 184.3 व मानक विचलन 21 है, तथा इन दोनों समूहों के बीच क्रान्तिक अनुपात का मान 1.39 है जो कि डी0एफ0 98 पर 0.05 सार्थकता स्तर पर सारिणी मान (1.97) से कमहै। अतः सी०आर० का मान 0.05 स्तर पर असार्थक है।

अतः प्रस्तुत अध्ययन की शून्य परिकल्पना कि स्नातक स्तर के कला वर्गके छात्र तथा विज्ञान वर्ग के छात्राओं की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' 0.05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष

1. प्रस्तुत शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति इसी स्तर के कला वर्ग के छात्रों की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति की तुलना में अधिक है। दोनों अभिवृत्तियाँ के मध्यमानों के मध्य 0.05 सार्थकता स्तर पर अन्तर सार्थक है। अतः वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति छात्रों के वर्ग विभाजन से प्रभावित होती है। जिसका कारण सम्भवतः कला वर्ग के छात्रों में समान गतिशीलता एवं समान सामाजिक सहभागिता का कम होना है।

2. प्रस्तुत शोध के निष्कर्ष यह इंगित करते हैं कि स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग के छात्राओं की वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति इसी स्तर के कला वर्ग के छात्राओं की तुलना में अधिक होते

हुए भी एक समान है एवं दोनों ही अभिवृत्तियों के मध्यमानों के मध्य किसी भी स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं है। अतः वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति छात्राओं के वर्ग विभाजन से प्रभावित नहीं होती जिसका कारण दोनों ही वर्ग के छात्राओं के द्वारा शिक्षा के महत्व को समझना है जिसके कारण वे इस सम्बन्ध में समान अभिवृत्ति रखती है।

3. प्रस्तुत शोध से यह परिणाम प्राप्त होता है कि विज्ञान वर्ग के छात्रों का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति इसी स्तर के कला वर्ग के छात्राओं की अपेक्षाअधिक होते हुए भी एक समान है दोनों समूहों की अभिवृत्तियों के मध्यमानों मध्य किसी भी स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं है। अतः कहा जा सकता है कि इन दोनों वर्गो के छात्र–छात्राएँ वैश्विक एकता के उन्नयन के प्रति समान अभिवृत्ति रखते है क्योंकि वे इससे समान रूप से जुड़े हुए हैं तथा वैश्वीकरण से समान रूप से प्रभावित है।

4.प्रस्तुत शोध अध्ययन से यह प्राप्त होता है कि स्नातक स्तर के विज्ञान वर्ग की छात्राओं का वैश्वीकरण के प्रति अभिवृति इसी स्तर के कला वर्ग के छात्रोंकी तुलना में अधिक होते हुए भी एक समान है दोनों समूहों की अभिवृत्तियों के मध्यमानों के मध्य किसी भी स्तर पर सार्थक अन्तर नहीं है।

शैक्षिक निहितार्थ

वैश्विक युग में उच्च शिक्षा में सुधार हेतु शैक्षिक गुणवत्ता पर विशेष बल, शहरी तथा ग्रामीण शिक्षा हेतु संसाधनों में वृद्धि समाज के लोगों के सामाजिक स्थिति का उन्नयन, आर्थिक स्थिति में सुदृढ़ता, जातिगत भावनाओं की उपेक्षा इत्यादि ये सब कारण निश्चित रूप से वैश्वीकरण की अवधारणा को प्रभावित कर रहे हैं। इनमें सकारात्मक सुधार होने की आवश्यकता है जिससे सभी वर्ग, जाति, समुदाय, राष्ट्र के लोग अपने सोच समझ और विचार को संकीर्णता से ऊपर उठाकर सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ सके ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर निश्चित रूप से उनमें राष्ट्रीयकरण, अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध तथा विश्वव्यापीकरण की भावना होगी उनका स्वयं का परिवार का तथा देश के विकास में सकारात्मक भूमिका हो सकेगी। प्रस्तुत शोधकार्य से इन विन्दुओं पर विशेष ध्यान देने की ओर संकेत मिल रहा है जिससे शिक्षा शैक्षिक गुणवत्ता के साथ–साथ वैश्वीकरण को भी अंगीकार कर सकेगी।

आज की परिस्थितियाँ किसी देश और समाज को संकुचित परिधि से विस्तृत परिधि की ओर जाने के लिए बाध्य कर रही है। वैश्वीकरण शिक्षा के वैश्वीकरण के अभाव में समान गति से समबद्धता एवं विकास करना सम्भव नहीं हो सकेगा। इस परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोध कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण दिशा प्रदान करने वाला है इस शोध कार्य के निष्कर्षो से प्रेरणा लेकर शिक्षा जगत एवं शिक्षा व्यवस्था में वैश्वीकरण के सन्दर्भ में आगे बढ़ा जा सकता है। सुधार करकेवैश्वीकरण के सन्दर्भ में आगे बढ़ा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

अग्रवाल, जे०सी० – स्वतंत्र भारत में शिक्षा का विकास, आर्य बुक डीपो, दिल्ली, 1908।

आल्टवाक फिलिप जी० – भूण्डलीकरण एवं विश्वविद्यालय आसमान दुनियाके मिथक एवं चार्थ परिय 2004।

कुमार, अजय – धर्म, संस्कृति साम्प्रदायिकता और वैश्वीकरण, उद्भावना प्रकाशन, नई दिल्ली –2002

कपिल, एच०के० – सांख्यिकीय के मूल तत्व (सामाजिक विज्ञानों में), भार्गव प्रकाशन, आगरा 1995 ।

कुरियन, सी०टी० – वैश्विक पूँजीवादी और भारतीय अर्थ– व्यवस्था ।

गुप्ता, एस०पी० – आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद 2010।

गुप्ता, एस०पी० – सांख्यिकीय विधियाँ शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद 2003। जयपुर 2004 ।

झिंगन, एम0एल0 – अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, वृन्दा पब्लिकैशन प्रा०लि०, नई दिल्ली 2004

दूबे, अभय कुमार – वैश्वीकरण के विविध आयाम, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद ।

पपोला, टी०एस० – ग्लोबलाइजेशन एण्ड सोशल इक्सक्लूशन इवालवींग इन इनक्लूसनरी पालिसी फ्रेमवर्क जेनेवा 2003 ।

पाण्डेय, रवि प्रकाश – वैश्वीकरण एवं समाज, शेखर प्रकाशन इलाहाबाद 2005 ।

पाण्डेय, विमलेश कुमार – वैश्वीकरण के विविध आयाम, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2005।

पाण्डेय, वी०पी० – शैक्षिक और सामाजिक अनुसंधान एवंसर्वेक्षण वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।

पणिक्कर, के०एन० – वैश्वीकरण, संस्कृति और साम्प्रदायिकता ।

बेस्ट, जान डब्लू – रिसर्च इन एजूकेशन, प्रेन्ट्रीस हॉल ऑफ इण्डिया न्यू देलही 1977

बुच एम०बी० – सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, बड़ौदा 1974 ।

बुच, एम०बी० – फोर्थ सर्वे ऑफ एजुकेशनल रिसर्च वोल्यूम 1, 1983–87 ।

बुच, एम०बी० – फिफ्थ सर्वे ऑफ एजुकेशनल रिसर्च वोल्यूम 1, 1987–92 ।

बेस्ट, जॉन डब्लू – रिसर्च इन एजूकेशन, पेक्टिस हाल इन कार्पोरेशन, 1972 ।

भारत में सामाजिक परिवर्तन – एन०सी०आर०टी, नई दिल्ली 2003 ।

भगवती, जगदीश – इन डिफेन्स ऑफ ग्लोबलाइजेशन आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस नई दिल्ली 2004 ।

राय, पारसनाथ – अनुसंधन परिचय, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा 2004।

राय, शशिकान्त – आधुनिक विश्व एक आयाम नई दिल्ली 1999 ।

रूहेला, सत्पाल – भारतीय शिक्षा का समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, 1992 ।

शर्मा, रामनाथ – शैक्षिक समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर 1999।

समाचार पत्र – अभावों से घिरी उच्च शिक्षा सम्पादकीय. दैनिक जागरण, लखनऊ संस्करण, 3 फरवरी 2008 ।

समाचार पत्र – हिन्दी का वैश्विक विस्तार, सम्पादकीय, दैनिक जागरण, लखनऊ संस्करण, 2 अक्टूबर 2008।

समाचार पत्र – समान पाठ्यक्रम की चुनौती सम्पादकीयइदैनिक जागरण, लखनऊ संस्करण,द17 फरवरी 2009 ।

समाचार पत्र – उच्च शिक्षा को मुनाफाखोरी से बचाइये सम्पादकीय, दैनिक जागरण, लखनऊ संस्करण, 4 अगस्त 2009 ।

समाचार पत्र – उच्च शिक्षा को निजीकरण से बचाइये सम्पादकीय, अमर उजाला, इलाहाबाद संस्करण, 18 सितम्बर 2009 ।

समाचार पत्र – सिर्फ कमाई करने आएंगे विदेशी संस्थान सम्पादकीय, दैनिक जागरण, लखनऊ संस्करण, 29 मार्च 2010 ।

ओडिशा स्थापत्यकला एवं मूर्तिकला का विशेष–अध्ययन

सौम्या पाण्डेय
डॉ0 कामना शुक्ला

कृपालु महिला महाविद्यालय,
कुण्डा प्रतापगढ़

उड़ीसा स्थापत्य कला एवं मूर्ति कला:–

प्राचीन काल में उड़ीसा को कलिंग के नाम से जाना जाता था। इस क्षेत्र का दूसरा प्राचीन नाम उत्कल था। उत्कल अर्थात उत्कृष्ट कलाओं एवं कलाकारों से परिपूर्ण देश। इसके प्राचीन से लेकर मध्यकाल तक विभिन्न नाम प्राप्त होते हैं। उत्करात, ओड्र, ओद्र, ओद्रदेश, ओड, त्रिकलिंग, दक्षिण कोसल, कंगोद, तोषाली, छेदी तथा मत्स आदि नाम से जाना जाता था। परंतु इनमें से कोई भी नाम संपूर्ण उड़ीसा को इंगित नहीं करता था। अपितु यह नाम समय–समय पर उड़ीसा राज्य के कुछ भाग को ही प्रस्तुत करते थे। वर्तमान नाम ओडिशा से पूर्व इस राज्य को मध्यकाल में उड़ीसा नाम से जाना जाता था, जिसे आधिकारिक रूप से 4 नवंबर 2011 को ओड़िशा नाम में परिवर्तित कर दिया गया। ओड़िशा नाम की उत्पत्ति संस्कृत के शब्द ओड् से हुई है, इस राज्य की स्थापना भागीरथ वंश के राजा ओड ने की थी, जिन्होंने ओड– वंश व ओड् राज्य की स्थापना की। समय विचारण के साथ तीसरी सदी ईसा पूर्व से ओड् राज्य पर महामेघवाहन वंश, मठार वंश, शैलोदभव वंश, भौमकर वंश, नंदोद्भव वंश, सोम वंश, गंग वंश, व सूर्यवंश आदि का आधिपत्य भी रहा। प्राचीन काल में ओडिशा राज्य का वृहद भाग कालिंग नाम से जाना जाता था। सम्राट अशोक ने 261 ईसा पूर्व कलिंग पर चढ़ाई कर विजय प्राप्त की युद्ध में भारी नरसंहार से क्षुब्द होकर अशोक ने युद्ध त्याग कर बौद्ध मत को अपनाया वह उनका प्रचार प्रसार किया। दूसरी शताब्दी में खारवेल इस राज्य के एक शक्तिशाली शासक के रूप में उभरे। उनकी मृत्यु के बाद उड़ीसा गुमनामी में चला गया।

चौथी शताब्दी ईस्वी में गुप्त शासक समुद्रगुप्त ने उड़ीसा पर आक्रमण किया और इस राज्य तक अपना साम्राज्य बढ़ाया। 606 ईस्वी में उड़ीसा राज्य शशांक के अधीन था। उसके बाद सातवीं शताब्दी ईस्वी में गंग राजवंश की तरह एक के बाद एक कई ओड़िया राजवंशों ने इस राज्य पर शासन किया 795 ईस्वी में महा शिव गुप्त याजाति द्वितीय सिंहासन पर बैठा और उसके साथ उड़ीसा के इतिहास में सबसे शानदार युग की शुरुआत हुई। उन्होंने कलिंग उत्कल और कौशल को खारवेल की शाही परंपरा में एकजुट किया।

13वीं शताब्दी के दौरान और उसके बाद दिल्ली के मुस्लिम शासको ने ज्यादातर बंगाल में अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से उड़ीसा में घुसपैठ करने की कोशिश की लेकिन उड़ीसा के शासको ने उनकी आक्रामकता का विरोध किया बाद में ही शासन और मुगल बादशाह अपने प्रयासों में सफल हुएं। 16वीं शताब्दी के मध्य 592 तक उड़ीसा पर क्रमिक रूप से पांच मुस्लिम राजाओं का शासन रहा मुगलों के पतन के साथ ही मराठों ने उड़ीसा पर कब्जा कर लिया अंततः अंग्रेजों ने मराठों से राज्य पर कब्जा कर लिया। हालांकि उड़ीसा के कुछ हिस्सों में कई देशी रियासतें काम करती रही। उड़ीसा में ऐसे 26 राज्य थे 1936 में अंग्रेजों ने उड़ीसा को एक अलग प्रांत बना दिया। आजादी के बाद भारतीय एकता की सूत्रधार सरदार वल्लभभाई पटेल ने उड़ीसा की रियासतों को भारतीय संघ की रियासतों में पूरी तरह शामिल कर दिया।

वर्तमान नाम ओडिशा से पूर्व इस राज्य को मध्यकाल में उड़ीसा नाम से जाना जाता था, जिसे आधिकारिक रूप से 4 नवंबर 2011 को ओड़िशा नाम में परिवर्तित कर दिया गया। इस राज्य की स्थापना भागीरथ वंश के राजा ओड ने की थी, जिन्होंने ओड– वंश व ओड् राज्य की स्थापना की। तीसरी सदी ईसा पूर्व से ओड् राज्य पर महामेघवाहन वंश, मठार वंश, शैलोदभव वंश, भौमकर वंश, नंदोद्भव वंश, सोम वंश, गंग वंश, व सूर्यवंश आदि का आधिपत्य भी रहा। प्राचीन काल में ओडिशा राज्य का वृहद भाग कालिंग नाम से जाना जाता था।

धर्मः–

राज्य में 95 प्रतिशत से अधिक लोग हिंदू धर्म के अनुयायी हैं हिंदू संप्रदाय की तरह शैव और शक्ति भी उड़ीसा में हिंदू विश्वासों के सबसे पुराने तरीके हैं। जिनमें कई शाही राजवंशों ने इतिहास में अपने शासनकाल के दौरान स्मारक मंदिर स्थापित किया और उन्हें राज्य धर्म बनाया समुदाय विशेष की संगठन राज्य में बेहद लोकप्रिय है और पुरी में वार्षिक रथ यात्राएं दुनिया भर से तीर्थ यात्रियों को आकर्षित करती है जबकि उड़ीसा राज्य भर में समलेश्वरी, तारा–तारिणी, मंगला मंदिर ठकुरानी, तारिणी और मणिकेश्वरी जैसे देवी के प्रमुख मंदिर शक्ति और तांत्रिक पंथ को समर्पित है। राज्य की राजधानी में सैकड़ो मंदिर हैं इन्हें भारत के मंदिरों के शहर के रूप में भी जाना जाता है। राज्य की कुल जनसंख्या में लगभग 2–5 प्रतिशत इसाई हैं दो प्रतिशत मुस्लिम है तथा जैन बौद्ध एवं सिख धर्म को मानने वाले हैं।

मंदिर स्थापत्यः–

भारतीय मंदिरों का आविर्भाव अचानक नहीं हुआ, अपितु इसके पीछे एक सुदीर्घ परंपरा दिखाई देती है। मंदिर निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ तो मौर्य काल से ही शुरू हो गया था किंतु आगे चलकर उसमें सुधार होता गया और गुप्त काल को संरचनात्मक मंदिरों की विशेषता से पूर्ण देखा जाता है।

अति प्राचीन काल में मंदिर बेदी के रूप में खुले आकाश के नीचे बनाए जाते थे। जिसे चौरण कहा जाता था इसके ऊपर देव प्रतीक रखकर पूजा–अर्चना की जाती थी। मंदिर निर्माण

की दूसरे चरण में बेदी के चारों ओर बाड़ बनाने की प्रथा प्रारंभ हुई इसे प्राकार कहा गया। पहले यह बाँस या लकड़ी का बनता था जिसे अंततः पाषाण का बनाए जाने लगा। गुप्त काल से पहले बने मंदिर की निम्नलिखित कमियां थीः–

- इनका आकार छोटा था।
- गर्भ ग्रह तक पहुंचने के लिए सीढ़ियां नहीं थी।
- छतें सपाट थी जिसके कारण वर्षा जल के निकास की समस्या थी।
- यह आकार में बेहद छोटे होते थे, अलग से कोई प्रदक्षिणा पद नहीं था।

ओडिशा स्थापत्यः–

- ओडिशा स्थापत्य का प्रचलन 8वीं से 13वीं शताब्दी तक रहा।
- ओडिशा के विभिन्न शासक शैल, सोम, भौम, पूर्वी गंग या चेदि आदि वंशों से संरक्षण मिला।
- ओडिशा के मंदिर मुख्यतः भुवनेश्वर, पुरी और कोणार्क में स्थित है।
- ओडिशा वास्तुकला की अपनी पहचान धविशेषताओं में देउल (गर्भ– ग्रह के ऊपर उठता हुआ विमान तल) जगमोहन (गर्भ– ग्रह के बगल का विशाल हाल) नट मंडप (जगमोहन के बगल में नृत्य के लिए हाल) भोग मंडप परकोटा तथा ग्रेनाइट पत्थर का इस्तेमाल शामिल है।
- भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर, राजरानी मंदिर, पुरी का जगन्नाथ मंदिर, कोणार्क का सूर्य मंदिर, इस शैली के श्रेष्ठ उदाहरण है।
- कोणार्क के सूर्य मंदिर को 1884 ई में यूनेस्को की विश्व विरासत सूची में शामिल किया गया।
- लिंगराज मंदिर ओडिशा स्थापत्य की संपूर्ण विशेषताओं का सर्वोत्तम उदाहरण है।
- भुवनेश्वर में बाद में बने मंदिरों में सन 1278 में स्थापित अनंत वासुदेव मंदिर कई तरह में विशिष्ट है, मुख्य रूप से शैव स्थल पर वैष्णव आराधना को समर्पित एकमात्र मंदिर है, जो कि एक अलंकृत चबूतरे पर खड़ा है।

पुरी के मंदिरः–

शैली– यूं तो पूर्व मध्यकाल में जो शैली प्रचलित थी उसी का विकसित रूप उत्तर मध्यकाल में देखने को मिलता है परंतु अधिक भव्यता और अलंकरण के साथ जो की विशेष अलंकृत और श्रृंगार प्रधान शैली के रूप में प्रचलित हुई। उड़ीसा भर में इस कल के अनेक मंदिर फैले हुए हैं परंतु इनमें से मुख्य रूप से पुरी का जगन्नाथ मंदिर भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर

इस शैली के प्रमुख उदाहरण हैं, विद्वानों ने इन मंदिरों को कलिंग शैली के अंतर्गत रखा है। उड़ीसा के मंदिरों की शैली के संबंध में श्री राय कृष्ण दास जी का वक्तव्य ध्यान देने योग्य हैः– ''अत्यधिक अलंकृत होते हुए भी इसमें ऐसा भारीपन और थोथापन है एवं उनकी कुर्सी इतनी नीचे है कि इनकी भव्यता को बहुत बड़ा धक्का पहुंचता है इनके शिखर ऊपर पहुंचते–पहुंचते कुछ गोलाई लिए हो जाते हैं जिन पर चिपटापन आमलक गला दबाता सा जान पड़ता है।''

विषयः–

विषय की दृष्टि से इन मंदिरों में असंख्य मूर्तियां हैं जिनकी विशालता सजीवता एवं उत्कृष्टता आश्चर्यचकित कर देने वाली है। यहां नागकन्याओं नायिका की मूर्तियों को दर्शाया गया है। मंदिरों में रामायण, महाभारत तथा कृष्ण लीला से संबंधित दृश्य की भी भरमार है। जिन्हें कथात्मक शैली में अंकित किया गया है।

पुरी का जगन्नाथ मंदिरः–

पुरी का विश्व प्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर भगवान विष्णु को समर्पित है। इस मंदिर का निर्माण काल 1085 ई0 से 1090 ई0 के मध्य माना जाता है। मंदिर में भगवान जगन्नाथ सुभद्रा और बलराम की बड़ी–बड़ी विशाल मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। इनके अतिरिक्त शिव–पार्वती, ब्रह्मा–सावित्री एवं विष्णु–लक्ष्मी आदि की प्रतिमाएं भी हैं। जिनकी कल्पना यहां पर पुरुष प्रकृति मंदिरों में श्रेष्ठतम और विशालतम है। यहां बाहरी दीवार में तीन तोरण द्वारा बने हुए हैं। जिनमें से सिंहद्वार अत्यंत भव्य आकर्षक है।

शिल्प उदाहरणः–

यह मंदिर की बाह्य भित्तियों पर अष्ट दिक्पालों देवताओं में सूर्य गणेश कार्तिकेय ब्रह्मा व अर्धनारीश्वर की प्रतिमाएं वह पार्वती लक्ष्मी आदि देवियों की शिल्पाकृतियां उकेरी गई है। इनके मध्य के अंतराल में ब्याल और अनेक प्रकार की मनभावन मुद्राओं में सूरसुंदरियों का अंकन किया गया है।

रामायण और महाभारत की दृश्य उत्क्रीर्ण किए गए हैं जिनके अंतर्गत पांडवों का स्वर्गारोहण एक अत्यंत ही उत्कृष्ट कलाकृति है। संपूर्ण मंदिर में असंख्य मूर्तियां हैं उनमें से कुछ मूर्ति शिल्प आज विश्व प्रसिद्ध भी प्राप्त कर चुके हैं जिनमें से प्रेम पत्र लिखती एक नारी मूर्ति जिनके अलंकरणों की शोभा केश विन्यास भाव–भंगिमा और शारीरिक गठन इत्यादि अत्यंत दर्शनीय है। इसके अतिरिक्त भी अन्य असंख्य मूर्तियां इस मंदिर के शिल्प वैभव को द्विगुणित करती दिखाई देती है।

जिसमें सप्ताश्व–रथ, उषा, प्रत्यूष, दंड, पिंगल, गंधर्व तथा अन्य आकृतियां भी बनाई गई है। मुखकृति एवं आकर्षक अलंकरण है परंतु शरीर रचना में कठोरता दिखाई देती है। इस प्रतिमा

में सूर्य के मुख का मंद हास्य का भाव विशेष रूप से दर्शनी है समस्त अलंकरण सु{मता के साथ उकेरे गए हैं।

भुवनेश्वर के मंदिरः–

भुवनेश्वर को मंदिरों की नगरी भी कहा जाता है कि यहां की पवित्र झील के चारों ओर कभी लगभग 6000 मंदिर बने हुए थे किंतु अब केवल 100 मंदिर शेष बचे हुए। भुवनेश्वर में इस अवधि में बने मंदिरों में लिंगराज मंदिर (1100 ई0) मुक्तेश्वर (950 ई0) राजा रानी (11वीं शताब्दी का प्रारंभ) मेघेश्वर (1180 ई0) बृहदेश्वर कंदारेश्वर और अनंत वासुदेव (1275 ई0) मुख्य है।

लिंगराज मंदिरः–

इस विशाल मंदिर का निर्माण काल (1100 ई0) माना जाता है। जिसका व्यास 720•466 वर्ग फीट है जो साढ़े सात फीट मोटे दीवार से घिरा हुआ है। यह मंदिर पूर्वी भारत के रूप में की गई है।

कोणार्क का सूर्य मंदिरः–

उड़ीसा स्थापत्य कला शैली की सर्वोत्तम उपलब्धि कोणार्क में स्थित सूर्य मंदिर हैं यह पूरी से उत्तर पूर्व की ओर लगभग 20 मील की दूरी पर स्थित हैं इसे नरसिंह देव प्रथम ने (1238 से 64 ई0) के शासनकाल में निर्मित किया गया थां।

इसका विशाल शिखर लगभग 200 फीट ऊंचा है यद्यपि अब यहां भागनावस्था में हैं। यह सूर्य देवता के रथ की आकृति का बनाया गया है जिसे 7 सजे–संवरे अश्व खींचते हुए प्रदर्शित किए गए हैं। इसे ''ब्लैक पैगोडा'' के नाम से पुकारते हैं।

प्रमुख शिल्प उदाहरणः–

सूर्य प्रतिमा– यह प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि कोणार्क के इस मंदिर के गर्भ ग्रह की विशालतम सूर्य प्रतिमा का निर्माण सदाशिव ने ही किया था। यह सूर्य प्रतिमा अपने संपूर्ण लक्षणों के विकास की पराकाष्ठा प्रदर्शित करती हैं।

उड़ीसा स्थापत्य एवं मूर्ति कला की विशेषताएं–

उड़ीसा के अधिकांश मंदिर ऊंचे चबूतरे पर (पीढा) पर बने हुए हैं। प्रारंभिक मंदिरों को दिवाल तीन भागों में विभाजित है गण्डि (शिखर) पगों में विभाजित है। रेख देउल का शिखर ऊपर की ओर बढ़ते हुए अंदर की ओर हो गया है।

उड़ीसा मंदिरों में शिखर बनने की होड़ सी लग रही थी। प्रारंभिक चरण में परशुरामे"वरम् मंदिर में 1:3 में था वह अंत में (कोणार्क के सूर्य मंदिर) 1:7 तक पहुंच गया था।

उड़ीसा के सभी मंदिर अलंकरण से ओत –प्रोत थे आकृतियों में किंचित स्थूलता है। नाग कन्याओं, संगीत–बालाओं, वादकों एवं नायिका भेद इत्यादि से संबंधित शिल्पकृतियां अंकित हैं। अनेक स्थानों पर मातृत्व के प्रभाव को प्रदर्शित करने वाली नारी आकृतियां भी हैं।

निष्कर्षः– उपर्युक्त विवरण से यह कहा जा सकता है कि उड़ीसा में मंदिर निर्माण का कार्य अपेक्षाकृत दीर्घकाल तक चलता रहा मंदिर में शैलीगत विकास दृष्टिगोचर होता है यहां की मूर्ति कला अत्यंत सु{मता एवं सजीवता का घोतक प्रतीत होता है।

बौद्ध धर्म का इतिहास

रूचि यादव
डॉ0 कामना शुक्ला
कृपालु महिला महाविद्यालय,
कुण्डा प्रतापगढ़

मगध तथा राज्यों में पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार में बौद्ध धर्म का उदय और विकास हुआ। बुद्ध का अधिकांश समय बिहार में बीता तथा मृत्यु के उपरान्त राजगृह वैशाली व पाटलिपुत्र में क्रमशः तीन बौद्ध संगीतियाँ सम्पन्न हुई। लगभग 700 ई0पू0 में उत्तर प्रदेश के लोगो के भौतिक जीवन में क्रांति का मुख्य कारण था। इसके काल में लोहे का प्रयोग प्रारंभ हुआ।

बौद्ध के सामान्य अनुयायियों के लिये निश्चित नियम तथा शिक्षायें नवीन परिवर्तनों को पूर्ण रूप से ध्यान में रखती थी और उन्हें वैचाारिक रूप से उपासकों के दैनिक आचरण में गौतम बुद्ध अहिंसा का पालन सर्वाधिक महत्व देते यह कहा जाता है कि उपासक को पाँच यज्ञों को सम्पन्न करना चाहिये सम्बंधियों के लिये अतिथियों तथा पितरों के लिये राजा और देवताओं के लिये, इसके अतिरिक्त एक गृहस्थों से अपने गोत्र परिवार मित्रों दासों के लिये एवं किराये के मजदूरों की सहायता तथा स्वयं की रक्षा के लिये भी कहा गया कि शिल्पों को सीखना गृहस्थों का एक बराबर संस्तुत महत्वपूर्ण कर्तव्य है।

बौद्ध धर्म की उत्पत्ति

छठीं शताब्दी ई0पू0 का उदय हुआ। बौद्ध धर्म गंगा घाटी के मैदानों में अनेक सम्प्रदायों का उदय हुआ। बौद्ध ग्रंथ ब्रह्मजाल सूत्र में 62 तथा जैन ग्रन्थ सूत्रकृतांग 368 बतायी गयी है।

इन सभी आन्दोलनों में बौद्ध एवं जैन सर्व प्रमुख थे। इसी समय विश्व के अनेक देशों में भी बौद्धिक आन्दोलन के प्रमाण मिलते हैं।

चीन में कन्फूशियस ईरान में जरथ्रुष्ट, यूनान में पाइथागोरस जैसे धर्म का उदय हुआ। इसी समय छठी शताब्दी ई0पू0 में भारत बौद्ध तथा जैन धर्म की उत्पत्ति हुई।

बौद्धधर्म के उद्भव के कारण

बौद्ध धर्म के उद्भव के निम्न कारण थेः—

1. वैदिक धर्म में यज्ञिक कर्मकाण्डों का प्रचलन था।

2. संस्कृत भाषाओं का प्रयोग किया जाता था इसलिये जनसाधारण बौद्ध की ओर अधिक ध्यान केंद्रित हुये।

बौद्ध धर्म के संस्थापक

बौद्ध धर्म प्रवर्तक गौतम बुद्ध का जन्म वैशाख मास के पुष्य नक्षत्र तथा वृष राशि में हुआ। बुद्ध के जन्म से पूर्व उनकी माता ने एक स्वप्न देखा कि एक श्वेत हाथी ने जिसकी सूँड़ में कमल था। उनके गर्भ में प्रवेश किया (सिंघली परंपरा के अनुसार 624 ई0पू0 में) 563 ई0पू0 में हुआ।

इनका जन्म नेपाल की तराई में स्थित रूम्मिनदेई ग्राम के आम्र कुंज में शाल वृक्ष के नीचे गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। इसका प्रमाण मौर्य सम्राट अशोक का रूम्मिनदेई अभिलेख है।

दैनिक आचरण में गौतम बुद्ध अहिंसा का पालन सर्वाधिक महत्व देते यह कहा जाता है कि उपासक को पाँच यज्ञों को सम्पन्न करना चाहिये।

राजगृह वैशाली व पाटलिपुत्र में क्रमशः तीन बौद्ध संगीतियाँ सम्पन्न हुई। लगभग 700 ई0पू0 में उत्तर प्रदेश के लोगो के भौतिक जीवन में कांति का मुख्य कारण था।

बुद्ध के जन्म के कुछ समय बाद ही उनके महापुरुषों के 32 लक्षणों का दर्शन किया गया। गौतम के जन्म के समय कालदेवल कौडिन्य तथा ऋषि अतिश ने यह भविष्यवाणी की कि सिद्धार्थ चक्रवर्ती सम्राट बनेगा या संन्यासी बनेगा। बुद्ध के जन्म के सात दिन पश्चात् उनकी माता महामाया का देहान्त हो गया। 16 वर्ष की आयु में बुद्ध का विवाह शाक्य कुल की कन्या यशोधरा से हुआ। विवाह के 12 वर्ष पश्चात् सिद्धार्थ को राहुल नामक पुत्र प्राप्त हुआ। मंजिम निकाय के अनुसार एक दिन जब सिद्धार्थ अपने सारथी छन्दक के साथ नगर भ्रमण कर रहे थे, तब उन्होनें मार्ग में क्रमशः चार दृश्य देखेः—

1. जर्जर शरीर युक्त वृद्ध व्यक्ति
2. व्यवस्था पूर्ण रोगी
3. मृत व्यक्ति
4. प्रसन्न मुद्रा में सन्यासी

धर्म चक्र प्रर्वतन

गृहत्याग का प्रधान कारण था उनकी चिन्तनशील प्रवृत्ति तथा दुःख से जलते संसार सुरक्षा का उपर्युक्त उपाय खोज निकालना। सांसारिक दुःखों से द्रवित होकर सिद्धार्थ ने 29 वर्ष आयु में अपनी पत्नी व पुत्र को शयनावस्था मे छोड़कर अपने घोड़े कन्थक तथा छन्दक के साथ गृह त्याग दिया। गृह त्याग की इस घटना को महाभिनिष्क्रमण कहा जाता है। सर्वप्रथम अनोमा नदी पर उन्होंने अपने राजसी वस्त्र त्याग दिये और सिर मुड़वाकर भिक्षु वस्त्र धारण किये।

गृह त्याग के पश्चात् गौतम ने वैशाली में सांख्यदर्शन के आचार्य अलारकलाम को अपना प्रथम गुरू बनाया। तत्पश्चात् गौतम ने पांच ब्राह्मणों ने बुद्ध पर तपस्या मार्ग आरोप लगाया तथा बुद्ध का साथ छोड़कर ऋषिपत्तन के मृगदाव (सारनाथ) आ गये।

तत्पश्चात् गौतम ने (35 वर्ष की आयु में) उरूवेला में ही निरंजना नदी (आधुनिक फल्गू या लिलाजन नदी अन्य नाम) तट पर न्यग्रोथ वृक्ष के नीचे समाधि लगाई अन्तिम दिन की रात्रि के तीन यामों में उन्होंने तीन पूर्व जन्म स्मृति रूप दिव्य चक्षु तथा प्रतीस समुत्पाद का ज्ञान प्राप्त की।

अंकीय विपणन की चुनौतियाँ, समस्याएं और समाधानः जनपद प्रयागराज के विशेष संदर्भ में

डॉ० राजेन्द्र कुमार मिश्र
(एसोसिएट प्रोफेसर)

शोध निर्देशक
वाणिज्य विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज

संदीप कुमार तिवारी

शोधकर्त्ता
वाणिज्य विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज

शोध सारांश

व्यवसायों में नई तकनीकों का उपयोग ने अंकीय विपणन को और भी लोकप्रिय बना दिया है। इसने पुराने विपणन के तरीकों को पूरी तरह से बदल दिया है और विपणनकर्ताओं को अपने उत्पादों और सेवाओं को बेचने के लिए अपने ग्राहकों के साथ इंटरनेट के माध्यम से संपर्क में रहने के लिए मजबूर किया है। इसलिए, सबसे अच्छी विज्ञापन योजना और व्यापारिक लक्ष्य सेट करते समय, विपणनकर्ताओं को अंकीय विपणन के लाभों और हानियों को विचार करना और विश्लेषण करना होगा। क्योंकि अंकीय विपणन सभी व्यवसायों द्वारा उपयोग किया जाता है क्योंकि यह प्रभावी और प्रभावशाली है, और इसकी लोकप्रियता हर दिन तेजी से बढ़ रही है। व्यवसाय जल्द ही बड़े व्यवसायों के साथ एक ही मंच पर प्रतिस्पर्धा करने में आसानी महसूस करेंगे। इसलिए, अंकीय विपणन अब उन्हें जिस अंकीय दुनिया में हम रहते हैं, छोटे और बड़े व्यवसायों दोनों के लिए आवश्यक है। यह पेपर अंकीय विपणन की चुनौतियों और समस्याओं और उनके समाधानों, जनपद प्रयागराज के विशेष संदर्भ में, का एक सिद्धांतिक ढांचा है।

कीवर्डः– अंकीय विपणन, चुनौतियाँ, समस्याएँ, प्रतिस्पर्धा।

1. परिचय

"अंकीय विपणन" शब्द वह आधुनिक प्रकार की विज्ञापन दान को दर्शाता है जिसमें विक्रेताओं और प्रमोटर अपने इच्छित जनसंख्या तक पहुंचने के लिए इंटरनेट और अन्य अंकीय प्लेटफॉर्मों पर निर्भर करते हैं। अंकीय विपणन, अपने विस्तृत संदर्भ में, विज्ञापन या सेवा की प्रचार का

अभ्यास है जो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के माध्यम से किया जा सकता है। यह किसी भी को बनाया जा सकता है, कहीं भी। इसलिए, आधुनिक, अंकीय–संवर्धित विज्ञापन उन्हें किसी भी और सभी लक्ष्य जनसंख्या को पृथ्वी के किसी भी हिस्से तक पहुंचने का संभावनात्मक बना देता है। आधुनिक उपभोक्ता के कार्यों ने सांस्कृतिक, भाषाई, और स्थानीय अंतरों को बाधाओं को पुल करने में मदद की है। इसलिए, छात्र से व्यवसाय मालिकों तक, सभी को अंकीय विपणन पर कदम रखने की जरूरत है।

अंकीय विपणन विज्ञान के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जो व्यापारिक निर्णय लेने में महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान करता है। हालांकि, इसके साथ ही विपणन अनेक समस्याओं का सामना करता है जो उसके प्रभाव को बाधित कर सकती हैं। इस अध्याय में, हम अंकीय विपणन की समस्याओं का विश्लेषण करेंगे। इसके अलावा, हम विपणन के विभिन्न पहलुओं के प्रभाव को अध्ययन करेंगे और उन्हें समझेंगे जो उत्पन्न हो सकती हैं, जैसे कि डेटा गोपनीयता, उपभोक्ता विश्वास, और नैतिकता के मामले। यह समस्याएं अंकीय विपणन के प्रयोग को अधिक विशेष बनाती हैं और व्यावसायिक निर्णयों को प्रभावित कर सकती हैं।

2. साहित्य की समीक्षा

"अंकीय विक्रय" शब्द का उपयोग अंकीय प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके बिक्री प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाने और खरीदार पसंदों को बेहतर समझने के लिए किया जाता है (चौफी, 2013)। इस परिणामस्वरूप, कार्यों द्वारा खोजे जाने वाले ज्ञान और कौशल में परिवर्तन हुआ है (श्ली और कार्न्स, 2017) और अंकीय साक्षरता और विश्लेषणात्मक शक्ति वाले पेशेवरों की एक संगत मांग (ग्रेवाल, रॉगेवीन, और शंकरनारायणन, 2015)।

हाल ही में एक अध्ययन और मूल्यांकन में, यू.एस. और यू.के. संगठनों में मार्केटरों का केवल 8: को अंकीय विपणन के मौलिक ज्ञान का पता चला (ओश्ब्रायन, 2016), लेकिन दो तिहाई से अधिक ने कहा कि उन्हें अपने नौकरियों को बनाए रखने के लिए अंकीय विपणन के बारे में और अधिक सीखने की आवश्यकता है।

"कुछ लोगों ने यह तर्क दिया है कि एक विश्वविद्यालय की विपणन शिक्षा का निर्माण उसके सिद्धांतिक परिणामों (पेटकस, 2007) पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए या कि कुछ स्कूलों द्वारा केवल व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्रित ध्यान में लिया जाना चाहिए (शिब्रोस्की, पेल्टियर, और बोयट, 2002), लेकिन कार्यस्थल के लिए तकनीकी ज्ञान की उचित मांग की उचितता के रूप में उच्च मांग यूनिवर्सिटियों को पुनः मूल्यांकन करने के लिए मजबूर कर रही है"।

(मुन्शी, 2012) ने एक अध्ययन किया जिसमें पाया गया कि पारंपरिक विज्ञापन को अंकीय विक्रय ने प्रभावित किया है। इसके कारण, यह आर्थिक विश्लेषण करने में आसान होना चाहिए और सरकार को अधिक प्रभावी ढंग से काम करने के लिए अद्भुत संभावनाएँ प्रकट कर सकता

है।

राई (2018) के अनुसार, अंकीय विक्रय वस्तुओं और सेवाओं की बिक्री बढ़ाने का एक माध्यम के रूप में महत्वपूर्ण हो गया है। इसलिए, विपणनकर्ता इस नए प्रकार के विपणन उपाय का उपयोग करते हैं। अंकीय विक्रय के विकास ने कंपनियों और संगठनों के उत्पादों और सेवाओं का प्रचार करने के तरीके में परिवर्तन लाया है जिसमें अंकीय प्रौद्योगिकियों और मंचों का उपयोग किया गया है। जैसा कि हम एक क्षण में देखेंगे, हाल के वर्षों में सोशल मीडिया की हालत विपणन को दर्शाती है।

(अलज्यूड, 2018), जिसमें वर्तमान समय में, अंकीय विक्रय अपनी विस्तृत सीमा को बढ़ाने का एक और माध्यम बनाता है। इसके सीधे परिणामस्वरूप, उपभोक्ताओं को ऑनलाइन खरीदारी के बारे में काफी उत्साही हो रहे हैं और उन्हें यह अनुभव हो रहा है कि व्यवसाय इंटरनेट के माध्यम से करना तुलनात्मक रूप से अधिक सुरक्षित है।

व्यवसाय करने के परंपरागत रूप ने ई–कॉमर्स मॉडल के लिए जगह बनाई है आधुनिक विपणन योजनाओं में सोशल मीडिया एकीकरण शामिल है क्योंकि लगभग सभी व्यवसाय अब वेबसाइट रखते हैं।

व्यवसाय अंकीय विपणन की संभावनाओं को प्रभावी रूप से प्राप्त करने में बहुपेक्षीय चुनौतियों का सामना करते हैं। ये चुनौतियाँ संसाधनों की कमी और प्रौद्योगिकी सीमाओं से लेकर उपभोक्ता व्यवस्थापन और अभियान के प्रभाव को मापने में कठिनाइयों तक विस्तारित होती हैं।

(लैम्बर्टन और स्टीफन, 2016) सोशल मीडिया और अंकीय प्रौद्योगिकी ने ग्राहकों को सोशल आयाम के साथ उन्हें प्राप्त, सूचित, बेचने, सीखने, और सेवाओं की प्रदान करने के नए तरीके संभव बनाए हैं। इससे उन अनुभवों में परिवर्तन आया है जो ग्राहकों को इन प्रौद्योगिकियों का उपयोग करते समय होते हैं।

1. **अध्ययन का उद्देश्य**
   - अंकीय विपणन में उत्पन्न समस्याओं, चुनौतियों और चुनौतियों का मूल्यांकन करना।
   - अध्ययन के परिणामों को न्याय से समर्थन करना।
2. **अंकीय विपणन का मुख्य ध्येय**

अंकीय विपणन के अवसर विभिन्न उपकरणों और तकनीकों का उपयोग करने के बाद, अंकीय विपणन सफल हो सकता है और नए अवसरों के दरवाजे खोल सकता है। ये उपकरण विपणनकर्ताओं को अंकीय विपणन से सर्वाधिक लाभ प्राप्त करने में मदद करते हैं, जैसेः–

- **लोगों के लिए आसानः–** अंकीय विपणन संगठनों को एक साथ कई ग्राहकों से संपर्क करने में मदद करता है। इंटरनेट विपणन ग्राहकों और संभावित ग्राहकों तक पहुँचने का एक तेज तरीका है। सोशल मीडिया विपणन ने फेसबुक, यूट्यूब, इंस्टाग्राम, लिंक्डइन, पिंटरेस्ट, आदि पर बिक्री को प्रोत्साहित करने के तरीके को परिवर्तित कर दिया है।

- **सीधे प्रचारः–** अंकीय विपणन एक उत्पाद या ब्रांड का सीधा प्रचार करता है। व्यवसाय अब अंकीय नेटवर्कों पर विज्ञापन कर सकते हैं। ऑनलाइन विपणनकर्ताओं को एक अच्छी विज्ञापन योजना और बिक्री प्रोत्साहन उपकरणों के साथ एक प्रतिस्पर्धी बाजार में सफलता मिल सकती है।
- **हमेशा विज्ञापनों का प्रदर्शन होनाः–** ग्राहक किसी भी समय, कहीं भी अंकीय विज्ञापन देख सकते हैं। संभावित ग्राहक किसी भी वेबसाइट पर विज्ञापन देख सकते हैं। लंबे समय तक चलने वाले विज्ञापन ग्राहकों को आपसे संपर्क करने और आपके उत्पादों या सेवाओं को खरीदने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। ये विज्ञापन एक वेबसाइट के लिए अच्छे रूप से डिजाइन किए जाने चाहिए। यहां देखें कि वेबसाइट पर विज्ञापन कैसे स्थापित किए जाते हैं।
- **अंतरराष्ट्रीय प्रचारः–** ऑनलाइन विपणन का सबसे अच्छा विशेष है कि यह व्यापारों को पुनर्वास करने और अधिक लोगों तक पहुंचने की संभावना देता है।
- **उत्पादों और सेवाओं का प्रचारः–** जैसे ही व्यापारिक संसाधनों में इंटरनेट का उपयोग बढ़ता जा रहा है, ब्रांड अपने उपभोक्ता आधार को काफी बढ़ा सकते हैं और उनके साथ संलग्न होने की क्षमता को सुधार सकते हैं।
- **कम लागत का वितरण विधिः–** अंकीय विपणन वह विज्ञापन है जो प्रिंट, टेलीविजन, रेडियो, मुद्रित मीडिया और बाहरी विज्ञापन जैसे अधिक पारंपरिक तरीकों के बजाय इंटरनेट का उपयोग करता है। अंकीय विपणन में शामिल होने वाली किसी कंपनी के विज्ञापन बजट को कंपनी के विशिष्ट परिस्थितियों के अनुरूप बनाया जा सकता है।
- **ग्राहकों के लिए ऑनलाइन शॉपिंग की सुविधाः–** अंकीय विपणन के उछाल के कारण, उपभोक्ताओं को पूरे समय (24x7) ऑनलाइन शॉपिंग करने की संभावना हो गई है, चाहे उन्हें वस्त्रादि वास्तुओं की खरीद हो या नहीं। अंकीय विपणन के कारण, व्यवसायों को अब ग्राहकों को ऑनलाइन स्टोरफ्रंट की ओर निर्देशित करने का विकल्प है।
- **विपणन प्रयासों की जिम्मेदारीः–** अंकीय विपणन की सफलता, संबंधित गतिविधि की मात्रा और संभाषण की गुणवत्ता, अंकीय विपणन प्लेटफॉर्मों द्वारा प्रदान की जाने वाली विश्लेषिकी की मदद से मापी जा सकती है। विपणनकर्ता अंकीय विपणन के उपकरणों का उपयोग करके अपनी वेबसाइटों पर पोस्ट की गई जानकारी पर गुणवत्ता जाँच कर सकते हैं।
- **विपणन के पेशेवरी में सहायकः–** बढ़ती संख्या में व्यापार इंटरनेट के संभावनाओं को नए ग्राहकों तक पहुंचाने की संभावना को महसूस कर रहे हैं, और जिन्होंने अंकीय विपणन रणनीति और कार्यान्वयन में अनुभव हासिल किया है, वे अधिक मांग में हैं।

3. अंकीय विपणन की समस्याएं

अब एक संक्रमणात्मक चरण में है, जो एक गुप्त नहीं है। अन्य समस्याएं शामिल हैंरू उपभोक्ता की अपेक्षाएं लगातार बदल रही हैं, जिससे उन्हें पहले करना कठिन हो जाता है। हालांकि, विपणन सफलता उपभोक्ता केंद्रित ध्यान पर निर्भर होती है।

- **सीमित बजट आवंटनः–** व्यवसायों का एक बड़ा हिस्सा अपनी अंकीय विपणन गतिविधियों के लिए संसाधनों की पर्याप्तता के प्रति अनिश्चितता या तटस्थता प्रकट करता है। इस परिभाषित निवेश से व्यापक डिजिटल रणनीतियों के कार्यान्वयन को बाधित किया जा सकता है, जो अधिक पहुंच और प्रभाव की संभावनाओं को सीमित कर सकता है।
- **तकनीकी प्रतिबंधः–** बहुत से प्रतिक्रियादाताएं तकनीकी सीमाओं से उत्पन्न चुनौतियों को स्वीकारती हैं, जो प्रभावी अंकीय विपणन रणनीतियों के कार्यान्वयन को बाधित कर सकती हैं। पुराने सॉफ्टवेयर, उन्नत विश्लेषण उपकरणों तक की पहुंच की कमी, या टीम सदस्यों में तकनीकी विशेषज्ञता की कमी अनुकूलन प्रयासों को बाधित कर सकती है।
- **नाम से ध्यान केंद्रित करनाः–** रोचक सामग्री बनाने के प्रयासों के बावजूद, प्रतिक्रियादाताओं का कठिनाई से लाभ लेने और ध्यान केंद्र में बनाए रखने में कठिनाई होती है। यह इसका सुझाव देता है कि उत्पादित सामग्री और दर्शकों की पसंद के बीच एक अंतर है, जिससे अधिक उल्लेखन दरें और डिजिटल कैम्पेन की कम होती है।
- **ROI का मापनः–** डिजिटल मार्केटिंग अभियानों की ROI को सही ढंग से मापने में एक प्रमुख चुनौती है। निष्कर्षों या बिक्री को सीधे डिजिटल प्रयासों से जोड़ने में कठिनाई जोखिम को मान्यता दे सकती है और उपायों को अनुकूलित करने की क्षमता को कम कर सकती है।
- **सामग्री उत्पादनः–** बहुत सारे व्यापार स्वयं के अंकीय विपणन प्रयासों के लिए रोचक और प्रासंगिक सामग्री उत्पन्न करने में अवरोधों का सामना करते हैं। इसमें एक संघनित और उच्च गुणवत्ता की सामग्री की एक स्थिर धारा बनाए रखने की चुनौतियों को शामिल है, जो उपभोक्ता के साथ अपेक्षाएँ बनाता है, जिससे निकटता और प्रभाव कम होता है।
- **ब्रांड जागरूकताः–** डिजिटल मार्केटिंग में निवेश के बावजूद, व्यवसाय अपनी ब्रांड जागरूकता और पहचान को बढ़ाने में संघर्ष कर सकते हैं। यह ब्रांडिंग रणनीतियों में क्षमताओं की कमी को सूचित करता है, क्योंकि डिजिटल प्रयास ब्रांड संदेश और मूल्यों को लक्षित दर्शकों तक सही ढंग से संचारित करने में असफल हो सकते हैं।
- **अस्थिर ऑनलाइन मौजूदगीः–** विभिन्न डिजिटल चौनलों पर एक स्थिर ऑनलाइन मौजूदगी को बनाए रखना व्यवसायों के लिए चुनौतियों का सामना कराता है। प्लेटफॉर्मों पर ब्रांडिंग या संदेश में असंगति ब्रांड की पहचान को पतला कर सकती

है और उपभोक्ताओं को गुमराह कर सकती है, अंततः अंकीय विपणन प्रयासों की प्रभावकारिता को प्रतिबंधित कर सकती है।

- **लक्ष्य दर्शक तक पहुंचः–** व्यवसाय डिजिटल चौनलों के माध्यम से अपने लक्ष्य दर्शक तक सफलतापूर्वक पहुंचने में कठिनाई का सामना करते हैं। इसका कारण अपर्याप्त लक्ष्यित रणनीतियों में हो सकता है, जिससे संसाधनों का अपव्यय होता है और अधीनस्थ अभियान प्रदर्शन में कमी होती है।
- **सांस्कृतिक संवेदनशीलताः–** डिजिटल मार्केटिंग में सांस्कृतिक संवेदनशीलता की महत्वता को मानते हुए, व्यवसाय अपनी रणनीतियों में सांस्कृतिक नुआंसों को सक्रिय रूप से शामिल।
- **प्रतिस्पर्धा विश्लेषणः–** अपने प्रतिद्वंद्वियों के अंकीय विपणन गतिविधियों को मॉनिटर करने की महत्वता को मानने के बावजूद, व्यवसायों को प्रतिस्पर्धी विश्लेषण के लिए मजबूत रणनीतियों की कमी हो सकती है। उद्योग के ट्रेंड्स और प्रतिद्वंद्वियों के तकनीकों के बारे में सूचित न रहने के परिणामस्वरूप अवसर और बाजार के हिस्से में कमी हो सकती है।
- **तकनीकी एकीकरणः–** विभिन्न डिजिटल विपणन प्रौद्योगिकियों और प्लेटफॉर्मों का एकीकरण व्यावसायिकों के लिए चुनौतियों का सामना कराता है। इसमें अनुकूलन की समस्याएँ, डेटा समक्रमण, और विभिन्न चौनलों पर अद्भुत उपयोगकर्ता अनुभव सुनिश्चित करने की समस्याएँ शामिल हैं, जिससे कुल प्रचार प्रभावकारिता पर प्रभाव पड़ता है।
- **कौशल की कमीः–** व्यापक संख्या में व्यावसायिक अपने अंकीय विपणन टीम में कौशल अंतर को स्वीकार करते हैं, जिससे आवश्यक विशेषज्ञता वाले प्रतिष्ठान को भर्ती और रखने की चुनौतियों का संकेत मिलता है। यह उन्नत डिजिटल रणनीतियों के कार्यान्वयन को अवरुद्ध करता है और अपर्याप्त प्रचार प्रदर्शन की संभावना हो सकती है।
- **अनुदेशन मॉडेलिंगः–** विशिष्ट डिजिटल विपणन चौनलों को विन्यास करने में सही रूप से समर्पित करने के लिए चुनौतियाँ प्रचार प्रभावकारिता को सम्पूर्णतया मापने की क्षमता को बाधित करती हैं। अपर्याप्त समर्पण मॉडल गलत निर्णय लेने और अपर्याप्त संसाधन वितरण का कारण बन सकते हैं।

4. अंकीय विपणन के महत्वपूर्ण चुनौती कारक

तालिका संख्या– 1 महत्वपूर्ण चुनौती कारकों का विश्लेषण

क्रम संख्या	महत्वपूर्ण चुनौती कारक	द्वितीयक आंकड़ों के आधार पर (%)	परिणाम

1	बजट	47%	प्रकाशित अध्ययन के नतीजे में यह पाया गया कि बजट का प्रबंधन करना अधिक चुनौतीपूर्ण होता है।
2	प्रतिभा	12%	अध्ययन सुझाव देते हैं कि आजकल लगभग सभी कर्मचारी अंकीय समाधानों के साथ काफी आराम से महसूस कर रहे हैं। हालांकि, 12% लोग अब भी डिजिटलीकरण के दौरान चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।
3	डेटा प्रबंधन	10%	अध्ययन ध्यान देते हैं कि अंकीय युग में डेटा को संचित, प्रबंधित और बनाए रखना भी एक प्रमुख चुनौती है।
4	प्रौद्योगिकीकी परिवर्तनशीलता को अनुकूलित करना	8%	अध्ययनों ने देखा कि आजकल प्रौद्योगिकियों में बहुत अधिक बदलाव हो रहा है। इसलिए बहुत से संगठन अनुकूलन की चुनौती और समस्या का सामना कर रहे हैं।
5	ज्ञान उन्नयन	5%	अनुसंधान ने सुझाव दिया कि नए परिवर्तनों के बारे में लगातार अपडेट रहना, ज्ञान को अव्यावसायिक रूप से अपग्रेड करना एक प्रमुख चुनौती है।
6	आवधिक टीम मूल्यांकन	3%	अध्ययन सुझाव देते हैं कि नियमित मौजूदा मूल्यांकन करना भी खुद में एक चुनौती है।
7	निवेश पर लाभ केंद्रित ध्यान	15%	अनुसंधान के परिणाम निवेश–वापसी पर आधारित थे। क्योंकि अंकीय विपणन में हमेशा बड़ा निवेश होता है। इसलिए प्रत्येक संगठन मुख्य रूप से वृद्धि और उत्पादकता पर ध्यान केंद्रित करता है।

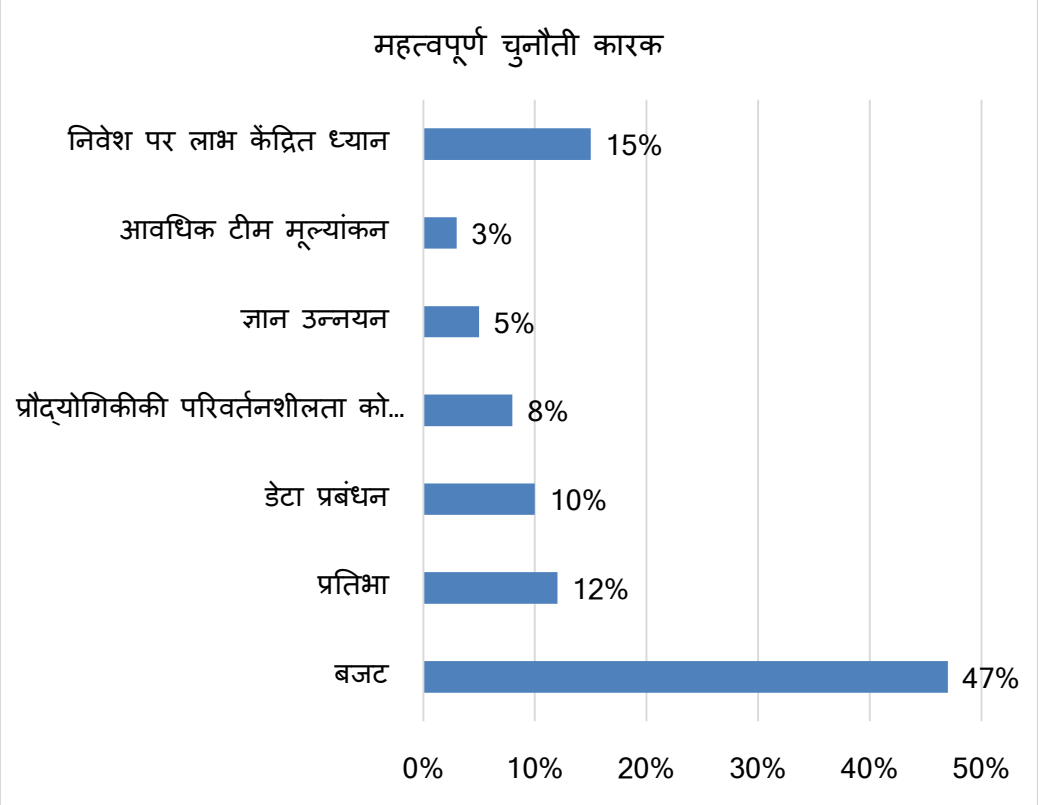

चित्र संख्या– 1 महत्वपूर्ण चुनौती कारकों का विश्लेषण

1. **अध्ययन के परिणाम और समाधान**

- अधिक ट्रैफिक प्राप्त करने के लिए अपनी साइट को सर्च इंजनों के लिए अनुकूलित करें।
- अंकीय बिलबोर्ड विज्ञापन अभियानों को शुरू और प्रबंधित करें।
- सदस्यों की सूची को इकट्ठा, श्रेणीबद्ध और उपयोग करके एक प्रभावी ईमेल अभियान की योजना और प्रबंधन करें।
- अभियान प्रमोशन।
- संबंधित सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का युक्तिगत उपयोग करके एक बड़े और अधिक निवेश किया गया अनुयायी ताकत को निर्मित किया जा सकता है।
- सोशल मीडिया अभियान मैट्रिक्स और अनुकूलन।
- कुल अंकीय विपणन गतिविधि का विश्लेषण और अनुकूलन किया जाएगा।

- कॉर्पोरेट अंकीय विपणन के लिए एक व्यापक रणनीति बनाएं और उसे कार्यान्वित करें।

2. निष्कर्ष

पिछले पांच वर्षों में, अंकीय विपणन का प्रचलन लगातार बढ़ता रहा है। ई–कॉमर्स के आगमन के साथ, किसी कंपनी की सेवाओं के मूल्य का संदर्भ उनकी भौतिक वितरण से उसके आभासी प्रचार और बिक्री में स्थानांतरित हो गया है। विपणनकर्ता और बिक्रीकर्ता अब अंकीय तकनीकों को अनदेखा नहीं कर सकते। व्यवसाय करने के परंपरागत रूप ने ई–कॉमर्स मॉडल के लिए जगह बनाई है, जिससे परिदृश्य परिवर्तित हो गया है। उद्योग में प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है, क्योंकि उपलब्ध वस्त्रों और उपलब्ध बाजारों की संख्या बढ़ रही है। आज के अधिकांश व्यवसाय या तो किसी प्रकार की अंकीय परिवर्तन रणनीति की योजना बना रहे हैं या कुछ प्रकार की अंकीय परिवर्तन रणनीति को कार्यान्वित कर रहे हैं।

अधिकांश माध्यमों की तुलना में, आधुनिक विपणन योजनाओं में सोशल मीडिया एकीकरण शामिल है क्योंकि लगभग सभी व्यवसाय अब वेबसाइट रखते हैं। हालांकि, सोशल मीडिया का बड़ा योगदान होता है, अंकीय क्रांति को संबोधित करने के लिए एक व्यापक रणनीति कई अन्य कारकों को भी संबोधित करनी चाहिए। अंकीय प्रौद्योगिकी का प्रभाव दिखाई देता है, और इसके प्रभाव अनियमित नहीं हैं।

एक अंकीय रणनीति को कार्यान्वित करने से पहले एक संगठन की सामर्थ्य और इच्छाशक्ति का मूल्यांकन करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि सभी अंकीय पहल कामयाब नहीं होंगी। हालांकि, पहले कितनी व्यापक पहल के क्षेत्र में, उसकी सफलता के अवसर भी उतने ही अधिक हैं। हमारा मानना है कि सबसे बड़ा प्रतिस्पर्धात्मक अवांतरण उनको मिलेगा जो पूरे रूप से रणनीतिक रूप से सोचते और कार्य करते हैं और वह तुरंत करें।

विश्लेषण से स्पष्ट हो रहा है कि व्यवसाय अंकीय विपणन की संभावनाओं को प्रभावी रूप से प्राप्त करने में बहुपेक्षीय चुनौतियों का सामना करते हैं। ये चुनौतियाँ संसाधनों की कमी और प्रौद्योगिकी सीमाओं से लेकर उपभोक्ता व्यवस्थापन और अभियान के प्रभाव को मापने में कठिनाइयों तक विस्तारित होती हैं। इसके अलावा, सदैव विकसित डिजिटल परिदृश्य के साथ अतिरिक्त जटिलताएँ होती हैं, जैसे कि डेटा गोपनीयता की चिंताएं, प्रतिस्पर्धा विश्लेषण, और बाजार के चलनों के साथ संयम करने की आवश्यकता। हालांकि, इन चुनौतियों के बीच नवाचार और विकास के लिए अवसर होते हैं।

पहचानी गई समस्याओं का समाधान करके और रणनीतिक समाधानों में निवेश करके, व्यवसाय अपनी अंकीय विपणन क्षमताओं को सुधार सकते हैं और अपने लक्ष्य दर्शकों तक पहुंचने और उन्हें आकर्षित करने के लिए नई राहों को खोल सकते हैं। इसमें संसाधन आवंटन को अनुकूलित करना, उन्नत प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाना, सामग्री रणनीतियों को परिष्कृत करना,

और संगठन के अंदर निरंतर सीखने और अनुकूलन की एक संस्कृति को प्रोत्साहित करना शामिल हो सकता है। अंततः, सफल अंकीय विपणन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो आंकड़ों से प्रेरित अनुसंधान, रचनात्मक कार्यान्वयन, और उपभोक्ता व्यवहार की गहरी समझ को शामिल करता है। इन सिद्धांतों को स्वीकार करके और इस विश्लेषण में उजागर की गई चुनौतियों का समाधान करके, प्रयागराज जिले के व्यवसाय डायनामिक डिजिटल परिदृश्य में दीर्घकालिक सफलता के लिए अपने को स्थिति दे सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

- अल–आजम, एफ. एफ., और अल–मिजीद, के. (2021). अंकीय विपणन का खरीदारी निर्णयों पर प्रभावरू जॉर्डन में एक मामला अध्ययन. द जर्नल ऑफ एशियाई फाइनेंस, इकोनॉमिक्स, और बिजनेस, 8(5), 455–463।
- आथपथ्थु, जे. सी., और कुलतुंगा, के. एम. एस. डी. (2018). ऑनलाइन खरीदने की प्रवृत्ति पर प्रभाव डालने वाले कारकरू श्रीलंकाई ऑनलाइन ग्राहकों का एक अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक एंड टेक्नोलॉजी रिसर्च, 7(9), 120–128।
- चाफी, डी. और स्मिथ, पी.आर. (2013) ई–विपणन एक्सीलेंस प्लानिंग और आपके अंकीय विपणन को ऑप्टिमाइज करना। 4 वीं संस्करण, टेलर और फ्रांसिस, लंदन।
- एलिसाबेटा, आई., और इओआनास, ई. (2014). सोशल मीडिया और उपभोक्ताओं के व्यवहार पर इसका प्रभाव। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इकोनॉमिक प्रैक्टिसेज एंड थियरीज, 4(2), 295–303 18। स्टीफन, ए.टी. (2016)। अंकीय और सोशल मीडिया विपणन की भूमिका उपभोक्ता व्यवहार में। करंट अपिनियन इन प्सायकोलॉजी, 10, 17–21।
- जगताप, एस. (2021). चेन्नई में ग्राहक खरीदारी में अंकीय विपणन का प्रभाव का अध्ययन। जर्नल ऑफ कंटेम्पोरेरी इश्यूज इन बिजनेस एंड गवर्नमेंट, 26(02)।
- मडियानो, एम. और मिलर, डी. (2013)। पॉलीमीडियारू इंटरपर्सनल संचार में अंकीय मीडिया के लिए एक नया सिद्धांत। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कल्चरल स्टडीज, 16(2), pp.169–187।
- मैरियन, टी.जेय बार्चजक, जी और हल्टिंक, ई.जे. (2014)। क्या सोशल मीडिया टूल डेवलपमेंट फेज पर प्रभाव डालते हैं? एक अन्वेषणात्मक अध्ययन। जर्नल ऑफ प्रोडक्ट इनोवेशन मैनेजमेंट, 31(S1), pp.18–29।
- श्ली, आर.पी. और हरीच, के.आर. 2010। 21वीं सदी में विपणन नौकरियों के लिए ज्ञान और कौशल आवश्यकताएं। जर्नल ऑफ विपणन एजुकेशन 32(3):341–352।
- श्ली, आर.पी. और कर्न्स जी.एल. 2017। विपणन स्नातकों के लिए नौकरी की मांगरू विभिन्न वेतन स्तरों के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल, और व्यक्तिगत गुणों में क्या अंतर है? जर्नल ऑफ विपणन एजुकेशन 39(2):69–81।

- संकरण, आर., और चक्रवर्ती, एस. (2022)। भारत में मोबाइल बैंकिंग पर प्रभाव डालने वाले कारकः प्रामाणिकता के साथ यूटीएयूटी 2 को विस्तारित करने का एक्सपीरिमेंटल दृष्टिकोण। आईआईएम कोझिकोड सोसाइटी और मैनेजमेंट रिव्यू, 11(1), 7–24।
- तल्रेजा, बी. (2021)। 2021 और आगे भारत में ऐप उपभोक्ता अर्जन। इन ऐप्सफ्लायर में।

दार्शनिक चिन्तन में योग साधना का महत्व

संतोष कुमार शुक्ल
शोध छात्र

दर्शनशास्त्र
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय),
प्रयागराज

डॉ0 अरविन्द शुक्ल (एसोसिएट प्रोफेसर)

शोध निर्देशक
विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र एवं योग विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय),
प्रयागराज

डॉ0 गोविन्द प्रसाद मिश्र (एसोसिएट प्रोफेसर)

(सह–शोध निर्देशक)
विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग
आईजीएनटीयू केंद्रीय विश्वविद्यालय
अमरकन्टक, मध्य प्रदेश

दुनिया भर में प्रचलित योग की अवधारणाओं का प्रस्फुटन भारतीय चिन्तनशास्त्र से ही हुआ हैं। एक सभ्य समाज के लिए अपने परिवार, जाति, समुदाय, क्षेत्र, राष्ट्र, भाषा और धर्म के भीतर अपनी उपलब्धि की भावना खोजने की मानवीय प्रवृत्ति केवल दूसरों के लिए अराजकता का कारण बनेगी। उनके विशेष संदर्भ ढांचे में, यह पूरी खोज किसी की पहचान खोजने के बारे में है, न कि शाश्वत शांति के बारे में। दुनिया में चल रहा लोकप्रिय विमर्श धर्म, देश और समुदाय के लोकलुभावन नारों से निर्देशित है। यह स्वार्थी है, भ्रामक है और एक–दूसरे को ऊँचा उठाने की बात है। अक्सर, धर्म और न्याय के नाम पर तथाकथित पहचान की लड़ाई के लिए समर्थन मांगा जाता है। क्या हमारे पास सामाजिक समता और समता प्राप्त करने की कोई अन्य पद्धति है? क्या कोई एक पद्धति है जिसका अनुसरण संपूर्ण मानव जाति कर सकती है? एक ऐसी पद्धति जो किसी राष्ट्र और उसके लोगों की एकता और अखंडता को नष्ट नहीं करती। एक ऐसी पद्धति जिसे हर व्यक्ति जीवन में परम सुख, शांति और आनंद प्राप्त करने के लिए अपना

सकता है और अभ्यास कर सकता है। हाँ, हमारे पास एक ऐसा ऐप है जिसका पालन उपरोक्त सभी जरूरतों को पूरा करने के लिए दुनिया भर के सभी लोग निडर और स्वतंत्र रूप से कर सकते हैं। यह कोई और नहीं बल्कि संत पतंजलि का अष्टांग योग है। अष्टांग योग ही है जो इस संसार में चल रहे खूनी युद्धों को रोक सकता है। यह सांसारिक से लेकर उच्चतम स्तर तक जीवन के हर चरण और चरण से संबंधित है। यह न केवल रोजमर्रा की गतिविधियों में बल्कि ध्यान और समाधि के उच्चतम चरणों तक पहुंचने में भी मार्गदर्शन करता है। स्वयं की पहचान और परम सत्य की खोज करने वाले किसी भी व्यक्ति को अष्टांग योग का अभ्यास करना चाहिए। योग वास्तव में किसी के भौतिक और आध्यात्मिक उद्देश्यों को पूरा करने का एक आसान, सरल और सबसे प्रभावी तरीका है। यह हमारे भीतर सुप्त आंतरिक दृष्टि को जगाता है। आंतरिक दृष्टि से रहित व्यक्ति शाश्वत शांति की ओर ले जाने वाले धार्मिक जीवन के उच्च मार्ग को अपनाने के बजाय, सुख की तलाश में कांटों से भरे आकर्षक मार्ग पर चलता है, जो केवल विनाश की ओर ले जाता है। ऐसे व्यक्ति का न तो यह जीवन सुधरता है और न ही अगला जीवन। योग मन को पूर्वाग्रहों, अहंकार, अनम्यता और गलत धारणाओं से मुक्त कर सकता है जो व्यक्तिगत और इस प्रकार समुदाय और राष्ट्र के विकास के मार्ग में सबसे बड़ी बाधाएं हैं। योग मन को दिव्यता से भर देता है, उसे पहाड़ से भी अधिक स्थिर और समुद्र से भी अधिक गहरा बना देता है। योग का अभ्यास अवसाद के समय शांति प्रदान करता है। यह सभी शंकाओं और शंकाओं को दूर करता है और परम आनंद की प्राप्ति का आश्वासन देता है। विश्व का इतिहास ऐसे लोगों की कहानियों से भरा पड़ा है जो योगाभ्यास से आत्म–साक्षात्कार प्राप्त करने में सफल रहे। ऐसे महान व्यक्तित्वों ने समाज में व्याप्त ईर्ष्या, द्वेष, अप्रसन्नता की नकारात्मक भावनाओं से छुटकारा पाया और धरती पर शांति लायी। साहित्य, दर्शन, विज्ञान, धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र में हुई भारी प्रगति केवल कुछ दृढ़ व्यक्तियों के ध्यान, एकाग्रता और कड़ी मेहनत के कारण ही संभव हो पाई है। आध्यात्मिक सत्य और छिपे रहस्यों को समझने के लिए हमें उच्च स्तर की एकाग्रता और समर्पण की आवश्यकता है। साथ ही दुनिया को आविष्कारों से जगमगाने और प्रकृति के रहस्यों से पर्दा उठाने वाले वैज्ञानिकों की एकाग्रता को भी कम नहीं आंका जा सकता। यदि वे लोग जिन्होंने मंत्रों पर चिंतन करते हुए अस्तित्वगत प्रश्नों के उत्तर खोजे, वे ऋषि हैं, तो वैज्ञानिक जो नई खोज करते हैं और प्रकृति के नियमों की खोज करते हैं, वे भी ऋषि हैं। जो व्यक्ति पूरी एकाग्रता और जागृत चेतना के साथ विभिन्न कार्यों को पूरा करता है वह ऋषि के समान कार्य

जो व्यक्ति पूरी एकाग्रता और जागृत चेतना के साथ विभिन्न कार्यों को पूरा करता है वह ऋषि के समान कार्य करता है। परमात्मा की अनुभूति से युक्त ज्ञानी ही वास्तविक ज्ञानी माना गया है। जिस साधना द्वारा आध्यात्मिक सत्ता का यथार्थ रूप से अनुभव और साक्षात्कार होता है उसे ही योग कहा गया है। योगी तपस्वियों से श्रेष्ठ है और शास्त्र–ज्ञानियों से भी श्रेष्ठ है।

करता है। ऐसा लोगों में निरंतर जागरूकता है और वे हमेशा नई ऊंचाइयों तक पहुंचने का प्रयास कर रहे हैं; उन्हें अग्रणी कहा जाता है। भारत के अनमोल ग्रंथ जैसे ब्रह्मसूत्र, आरण्यक, उपनिषद और चिकित्सा, ज्योतिष पर क्लासिक ग्रंथ सर्वोच्च ज्ञान का परिणाम हैं। ज्ञान–अविद्या, स्वर्ग–आदि द्वन्द्वों के स्वरूप विषयक ग्रन्थ भारतीय साहित्य शास्त्र में प्रचुर मात्रा में उपल्ध हैं।

रत्नगर्भा भारतीय वसुन्धरा ने यहाँ के निवासियों को प्रचुर धन–धान्य सम्पन्न जिस परिवेश को प्रदान किया, वह आध्यात्मिक चिन्तन हेतु पूर्णतया अनुकूल था। परिणामस्वरूप यहां के आदिकालीन ऋषि मुनि मात्र भौतिक वस्तुओं के ज्ञान से ही सन्तुष्ट नहीं हुए, अपितु उनके ह्रदय में "यह दृश्यमान जगत् क्या है", "कहां से आया", "कहां जायेगा", "मैं क्या हूँ", "क्या शरीर के साथ मेरी उत्पत्ति व समाप्ति निश्चित है" आदि प्रश्नों के विषय में जिज्ञासा हुई। ऋग्वेद में मानव ह्रदय की इस जिज्ञासा का अत्यन्त सरल एवं स्वाभाविक रूप से विवेचन किया गया है।[1]

कि स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।

अर्थात–"वह कौन सा वन है और कौन सा वह वृक्ष है जिससे द्युलोक पृथिवी– लोक (और इस दृश्यमान विशाल जगत्) की विधाता ने रचना की होगी। इसी प्रकार नासदीय सूक्त में कहा गया है कि–[2]

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्, कुत आजाता, कुत इयं विसृष्टिः।

अर्थात कौन जानता है और कौन यह बता सकता है कि यह जगत कहां से और कैसे उत्पन्न हुया और कहां जा रहा है।

इन्हीं प्रश्नों के समाधान स्वरूप जिन तथ्यों अथवा सिद्धान्तों का निरूपण किया गया उसे "दर्शन–शास्त्र" की संज्ञा दी गयी। इस प्रकार अनादि काल से सत्यानु– सन्धान के लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा किये गये प्रयोगों का इतिहास ही "दर्शन–शास्त्र" का इतिहास है ।

प्राचीन वांऽगमय के आलोचन से हमें यह विदित होता है कि प्राचीन दार्शनिक इस सत्यानुसन्धान के प्रयास में तार्किक बुद्धि द्वारा स्थापित सिद्धान्त मात्र को ही पूर्णतया प्रमाणिक नहीं मानते थे, अपितु उनकी मान्यता यह थी कि ये सिद्धान्त आध्यात्मिक अनुभव द्वारा परीक्षित हों–अर्थात् (जल में) प्रतिबिम्बित (वृक्ष की) शाखा के अग्रभाग में लगे हुए फल के आस्वादन से प्रसन्न होने के समान, मूर्ख व्यक्ति बिना अनुभूति के ही मैंने ब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया, ऐसा अभिमान कर व्यर्थ में ही प्रसन्न होता है।[3]

अनुभूतिं बिना मूढ़ो वृया ब्रह्मणि मोदते। प्रतिबिम्बितशाखाग्रफलास्वादनमोदवत्।।

इसी विचार की पुष्टि ईशोपनिषद् में इन शब्दों के माध्यम से की गयी है–

जो अविद्या की उपासना करते हैं वे तो अज्ञान–स्वरूप अन्धकार में प्रवेश करते ही हैं, परन्तु जो विद्या में रत हैं, वे भी अन्धकार में प्रवेश करते हैं।[4]

तात्पर्य यह है कि जो भौतिक सुखों के प्रति आसक्त हैं, वह तो अन्धकार मार्ग पर हैं ही, परन्तु जिन व्यक्तियों ने अनेक शास्त्रों का अध्ययन कर स्वयं को परमात्मज्ञानी समझा है, वे और भी अन्धकार में गमन करते हैं, क्योंकि शास्त्र–ज्ञान से अनिर्वाच्य परमात्म स्वरूप का यथार्थ ज्ञान नहीं हो पाता है। अतः परमात्मा की अनुभूति से युक्त ज्ञानी ही वास्तविक ज्ञानी माना गया है। जिस साधना द्वारा आध्यात्मिक सत्ता का यथार्थ रूप से अनुभव और साक्षात्कार होता है उसे ही योग कहा गया है। योग के इसी माहात्म्य के कारण गीता के निम्न श्लोक द्वारा योगी की सर्वोत्कृष्टता बतायी गयी है–

अर्थात् योगी तपस्वियों से श्रेष्ठ है और शास्त्र–ज्ञानियों से भी श्रेष्ठ है। अतः हे अर्जुन! तू योगी बन।[5]

तपस्विभ्यो अधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कमिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन।।

सुर, नर, तिर्यक, प्रेतादि जन्ममरणरोगादि से संतप्त समस्त प्राणि–निकायों को ही यह सौभाग्य प्राप्त है कि वह इस शरीर से परमात्मस्वरूप का अनुभव कर कैवल्य की प्राप्ति कर सके। श्मनसे वेदमाप्तव्य'[6] के अनुसार शरीर में स्थित मन के द्वारा परमात्म–दर्शन किया जा सकता है। आदि श्रुतियों की उक्तियों से यह स्पष्ट होता है कि, चित्त (मन, बुद्धि) तथा शरीरादि से युक्त जीव आत्मज्ञान प्रकाशन में समर्थ है, तथापि बाह्य विषयों एवं रोगादि से उपरोक्त चित्त में अबोध रूप से ज्ञान का प्रकाश नहीं हो पाता। अतः "दृश्यते त्वग्रयया बुद्धया सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभि"[7] श्रुति की इस उक्ति के अनुसार विशुद्ध बुद्धि अथवा चित्त में उत्पन्न ज्ञानप्रकाश द्वारा ही आत्मदर्शन किया जा सकता है। सम्पूर्ण योग शास्त्र में इसी चित्त अथवा जीव की स्वाभाविक शक्ति के उन्मीलन के हेतु साधन अभिहित हैं। योग–शास्त्र में बतायी गयी विधि का अनुसरण करने पर जीव में विद्यमान समस्त दोष एवं मलिनतायें तिरोहित हो जाती है । इस प्रकार जीव आत्म साक्षात्कार में समर्थ हो जाता है। यौगिक विधि द्वारा चित्त–शोधन पूर्वक आत्मसाक्षात्कार की प्रक्रिया को इस उपमा द्वारा सम्यक् रूप से समझा जा सकता है– किसी पात्र में जल डालकर उसमें स्वर्ण–कण डाल दिये जाएँ। यदि जल शुद्ध एवं निश्चल हो तो उन्हें देखा जा सकता है, परन्तु उसमें यदि मिट्टी मिली हो तो वे स्वर्ण–कण या तो दिखाई ही नहीं देगें अथवा दिखाई देंगे तो विकृत रूप में उनको देखने के लिए ऐसा उपाय करना होगा कि जिससे जल में स्थित मिट्टी निकल न जाय तो कम से कम बैठ जाय एवं जल निश्चल हो जाय। आत्मा सोने की भांति ही शुद्ध, बुद्ध, चौतन्य है। हम शुद्ध जल रूप चित्त से उसका साक्षात्कार कर सकते हैं। जल के मिट्टी को ही भांति चित्त रूपी जल में कामक्रोधादि वासनायं एवं पुराने संस्कार स्थित हैं। जिन्हें मल कहा जाता है। दूसरा दोष यह है कि प्रतिक्षण विभिन्न वृत्तियों में परिणत होने के कारण चित्त चंचल रहता है चित्त के इन दोषों का योग द्वारा उपशमन किया जाता है। इस प्रकार योग कोई नवीन शक्ति नहीं प्रदान करता और न ही कोई नवीन योग्यता उत्पन्न करता है, अपितु विशिष्ट विधि द्वारा

आत्मदर्शन के मार्ग में चित्त द्वारा उत्पन्न हुई बाधा को दूर करता है तथा जिस दर्पण में परमात्मस्वरूप को देखा जा सकता है उसे ही स्वच्छ कर देता है।[8]

अध्यात्म–सत्ता का साक्षात्कार कराने के कारण अध्यात्मजगत् में योग का स्थान उस केन्द्र के समान है जहां सम्पूर्ण दार्शनिक एवं धार्मिक सम्प्रदाय समान रूप से आकर मिलते हैं। प्रत्येक धर्म एवं सम्प्रदाय के जिज्ञासु साधकों ने योग की मुक्तकंठ से प्रशंसा की और उसका अवलम्बन लेकर अन्य जिज्ञासुओं एवं साधकों को भी साधना रूप में उसके अनुसरण की प्रेरणा दी। इसीलिए अपने "वेदान्त भाष्य" में योगदर्शन का खण्डन करते हुए भी "शंकराचार्य" ने यह स्पष्ट कर दिया है कि यौगिक क्रिया का खण्डन उनको अभीष्ट नहीं। स्वयं सूत्रकार व्यास ने "आसीनः सम्भवाद" जैसे सूत्र से इस ओर संकेत किया है।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची</u> :–

1. ऋग्वेद 10/27,
2. ऋग्वेद, नासदीय सूक्त,मन्त्र 6
3. मैत्रेय्युपनिषद्, 23
4. ईशोपनिषद् 9
5. गीता,6/46
6. कठोपनिषद्, 2/1/11
7. कठोपनिषद्, 1/3/12
8. तु. तस्मिश्चिद्दर्पणे स्फारे समस्ता वस्तुदृष्टयः। इमास्ताः प्रतिविम्वन्ति सरसीव तटद्रुमाः विष्णुपुराण

(साख्यप्रवचनभाष्य में उद्धृत)

कामकाजी महिलाओं के मानसिक तनाव पर योग के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन

स्नेहा यादव

शोध छात्रा,
दर्शनशास्त्र एवं योग विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय),
प्रयागराज

डॉ0 राजेश कुमार तिवारी (एसोसिएट प्रोफेसर)

शोध निर्देशक
दर्शनशास्त्र एवं योग विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय),
प्रयागराज

समकालीन भारत में कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक तनाव एक बढ़ती हुई चिंता का विषय है, जहाँ महिलाएँ पेशेवर जिम्मेदारियों और पारिवारिक कर्तव्यों के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करती हैं। योग, भारतीय संस्कृति में गहराई से निहित एक अभ्यास है, जिसने मानसिक स्वास्थ्य के प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण के रूप में प्रमुखता प्राप्त की है। यह शोध प्राणायाम, ध्यान और आसन जैसी विशिष्ट प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए, कामकाजी महिलाओं में तनाव कम करने पर योग के प्रभाव का पता लगाता है। निष्कर्ष भावनात्मक कल्याण को बढ़ाने, चिंता को कम करने और कामकाजी महिलाओं के बीच लचीलेपन को बढ़ावा देने में योग की परिवर्तनकारी क्षमता को उजागर करते हैं।

आधुनिक समाज में कामकाजी महिलाओं द्वारा निभायी जाने वाली चुनौतीपूर्ण भूमिकाओं का एक अपरिहार्य परिणाम मानसिक तनाव है। भारत में, पारंपरिक पारिवारिक भूमिकाओं को पूरा करते हुए पेशेवर क्षेत्रों में उत्कृष्टता हासिल करने की दोहरी उम्मीदें दबाव की परतें बढ़ाती हैं। तनाव विभिन्न रूपों में प्रकट होता है, जिसमें चिंता, भावनात्मक थकान और शारीरिक बीमारियाँ शामिल हैं, ये सभी व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन को बाधित कर सकते हैं। आर्थिक और

पारिवारिक क्षेत्रों में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए, तनाव का प्रभावी ढंग से प्रबंधन न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लिए बल्कि सामाजिक प्रगति के लिए भी आवश्यक है।

योग, भारत में शुरू हुई एक सदियों पुरानी प्रथा है, जिसे मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालने के लिए मान्यता दी गई है। अपने आध्यात्मिक अर्थों से परे, योग नियंत्रित श्वास, दिमागीपन और शारीरिक मुद्राओं के माध्यम से तनाव के प्रबंधन के लिए व्यावहारिक उपकरण प्रदान करता है। प्राणायाम और ध्यान जैसे अभ्यास आत्म–जागरूकता बढ़ाते हैं, कोर्टिसोल के स्तर को कम करते हैं और विश्राम को बढ़ावा देते हैं। यह पेपर भारतीय अध्ययनों और प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए जांच करता है कि कामकाजी महिलाओं के जीवन में योग को शामिल करने से मानसिक तनाव को प्रभावी ढंग से कैसे संबोधित किया जा सकता है।

महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य में योग की भूमिका :–

कई अध्ययनों ने भारत में कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक तनाव की व्यापकता को रेखांकित किया है। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरोसाइंसेज (छप्डभ।छै) की एक रिपोर्ट बताती है कि लगभग 25: कामकाजी महिलाएं मध्यम से गंभीर तनाव का अनुभव करती हैं। लंबे समय तक काम करने के घंटे, कार्यस्थल पर भेदभाव और पारिवारिक समर्थन की कमी जैसे कारक इस समस्या में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। पारंपरिक मुकाबला तंत्र अक्सर तनाव के मूल कारणों को संबोधित करने में विफल होते हैं, जिसके लिए योग जैसे वैकल्पिक तरीकों की आवश्यकता होती है।

योग को लंबे समय से मन और शरीर में सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता के लिए व्यवहार में उपयोग किया जा रहा है। भगवद गीता और पतंजलि के योग सूत्र मानसिक स्पष्टता और भावनात्मक स्थिरता प्राप्त करने के लिए एक उपकरण के रूप में योग पर जोर देते हैं। समसामयिक शोध इन प्राचीन ग्रंथों के अनुरूप है, जो योग के लाभों के वैज्ञानिक आधार को प्रदर्शित करता है। उदाहरण के लिए, इंडियन जर्नल ऑफ साइकाइट्री में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि नियमित योग अभ्यास से महिलाओं में चिंता और अवसाद के लक्षणों में काफी कमी आई है। इसी तरह, जर्नल ऑफ अल्टरनेटिव एंड कॉम्प्लिमेंटरी मेडिसिन ने बताया कि योग पैरासिम्पेथेटिक तंत्रिका तंत्र को बढ़ाता है, जिससे तनाव प्रतिक्रियाओं का मुकाबला होता है।

भारतीय कामकाजी महिलाएं, विशेष रूप से, योग की पहुंच और अनुकूलनशीलता के कारण इससे लाभान्वित होती हैं। सूर्य नमस्कार, प्राणायाम और निर्देशित ध्यान जैसे अभ्यासों को दैनिक दिनचर्या में एकीकृत किया जा सकता है, जिससे महत्वपूर्ण समय निवेश की आवश्यकता

के बिना राहत मिलती है। इसके अतिरिक्त, योग समुदाय की भावना को बढ़ावा देता है, जो शहरी और ग्रामीण परिवेश में समान रूप से भावनात्मक समर्थन के लिए महत्वपूर्ण है।

मानसिक तनाव पर योग का प्रभाव बहुआयामी है, जो शारीरिक और मनोवैज्ञानिक दोनों पहलुओं को संबोधित करता है। शारीरिक रूप से, योग स्वायत्त तंत्रिका तंत्र को नियंत्रित करता है, जिससे तनाव अक्सर ट्रिगर होने वाली लड़ाई–या–उड़ान प्रतिक्रिया को कम करता है। अनुलोम–विलोम और भ्रामरी प्राणायाम जैसी नियंत्रित श्वास तकनीकें मन को शांत करती हैं, रक्तचाप कम करती हैं और ऑक्सीजनेशन में सुधार करती हैं। ये लाभ विशेष रूप से कामकाजी महिलाओं के लिए प्रासंगिक हैं जो व्यस्त कार्यक्रम और मांगलिक भूमिकाओं के कारण लंबे समय तक तनाव का अनुभव करती हैं।

योग, भारतीय संस्कृति में गहराई से निहित एक अभ्यास है, जिसने मानसिक स्वास्थ्य के प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण के रूप में प्रमुखता प्राप्त की है। योग एकाग्रता और निर्णय लेने जैसे संज्ञानात्मक कार्यों में सुधार करके फोकस और उत्पादकता को बढ़ाता है। यह ध्यान और माइंडफुलनेस अभ्यास के माध्यम से भावनात्मक कल्याण में भी योगदान देता है, जिससे महिलाएं कार्यस्थल की चुनौतियों और व्यक्तिगत संबंधों को अधिक लचीलेपन के साथ संभालने में सक्षम होती हैं।

मनोवैज्ञानिक रूप से, योग सचेतनता और भावनात्मक लचीलापन पैदा करता है। ध्यान जैसे ध्यान अभ्यास, आत्म–चिंतन और जागरूकता को प्रोत्साहित करते हैं, जिससे महिलाओं को तनाव से दूर रहने और जीवन के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करने में मदद मिलती है। उदाहरण के लिए, मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चला है कि छह सप्ताह तक योग का अभ्यास करने वाली महिलाओं ने कथित तनाव के स्तर में 40: की कमी दर्ज की है। इस सुधार का श्रेय बढ़ी हुई मानसिक स्पष्टता और बेहतर मुकाबला तंत्र को दिया गया।

विशिष्ट योग आसन, जैसे शवासन (शव मुद्रा), बालासन (बच्चे की मुद्रा), और उत्तानासन (आगे झुकना), शारीरिक तनाव दूर करने में विशेष रूप से प्रभावी हैं। ये आसन मांसपेशियों को आराम देते हैं, परिसंचरण में सुधार करते हैं और शांति की भावना को बढ़ावा देते हैं। नियमित अभ्यास न केवल तनाव को कम करता है बल्कि मन–शरीर के संबंध को मजबूत करके इसकी पुनरावृत्ति को भी रोकता है।

भारतीय कामकाजी महिलाओं के केस अध्ययन योग के परिवर्तनकारी प्रभावों को और स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए, कॉर्पोरेट योग कार्यक्रमों में भाग लेने वाली महिलाओं ने उत्पादकता में सुधार, बेहतर फोकस और कार्यस्थल संघर्षों में कमी की सूचना दी। इसके अलावा,

समग्र स्वास्थ्य पर योग का जोर भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के साथ गहराई से मेल खाता है, जो इसे तनाव प्रबंधन के लिए एक स्वीकार्य और टिकाऊ समाधान बनाता है।

इसके सिद्ध लाभों के बावजूद, कामकाजी महिलाओं के जीवन में योग को एकीकृत करना चुनौतियाँ खड़ी करता है। समय की कमी एक महत्वपूर्ण बाधा है, क्योंकि कई महिलाएं काम और घरेलू जिम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाने के लिए संघर्ष करती हैं। इसके अतिरिक्त, योग में समय लगने या उन्नत कौशल की आवश्यकता के बारे में गलत धारणाएं भागीदारी को हतोत्साहित करती हैं। कार्यस्थल पहल और सामुदायिक कार्यक्रम इन बाधाओं पर काबू पाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। नियोक्ताओं को कर्मचारी कल्याण कार्यक्रमों के हिस्से के रूप में योग सत्र की पेशकश पर विचार करना चाहिए, जबकि सामुदायिक केंद्र शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के लिए सुलभ कक्षाएं प्रदान कर सकते हैं।

योग, भारत में शुरू हुई एक सदियों पुरानी प्रथा है, जिसे मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालने के लिए मान्यता दी गई है। प्राणायाम और ध्यान जैसे अभ्यास आत्म–जागरूकता बढ़ाते हैं, कोर्टिसोल के स्तर को कम करते हैं और विश्राम को बढ़ावा देते हैं।

योग को दैनिक दिनचर्या में शामिल करने से न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य बेहतर होता है बल्कि सामाजिक कल्याण में भी योगदान मिलता है।

योग के वैज्ञानिक आधार और व्यावहारिक लाभों पर जोर देने वाले जन जागरूकता अभियान भी इसे अपनाने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। योग से लाभान्वित होने वाली महिलाओं के सफल उदाहरणों को उजागर करना दूसरों के लिए प्रेरणा का काम कर सकता है। इसके अलावा, स्कूली पाठ्यक्रमों में योग को शामिल करने से आजीवन आदतें विकसित की जा सकती हैं, जिससे भावी पीढ़ियों को तनाव से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए तैयार किया जा सकता है।

योग कामकाजी महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण मानसिक स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है, जिससे उन्हें तनाव प्रबंधन, फोकस में सुधार और भावनात्मक संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है। तनाव, जो अक्सर व्यस्त काम और व्यक्तिगत जिम्मेदारियों के कारण होता है, को प्राणायाम और हठ योग जैसी योग प्रथाओं के माध्यम से कम किया जा सकता है, जो विश्राम और शांति को बढ़ावा देते हैं। इसके अतिरिक्त, योग एकाग्रता और निर्णय लेने जैसे संज्ञानात्मक कार्यों में सुधार करके फोकस और उत्पादकता को बढ़ाता है। यह ध्यान और माइंडफुलनेस अभ्यास के माध्यम से भावनात्मक कल्याण में भी योगदान देता है, जिससे महिलाएं कार्यस्थल की चुनौतियों और व्यक्तिगत संबंधों को अधिक लचीलेपन के साथ संभालने में सक्षम होती हैं। इस प्रकार

नियमित योगाभ्यास कामकाजी महिलाओं के लिए मानसिक स्वास्थ्य और समग्र कल्याण को बढ़ावा देने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में कार्य करता है।

योग भारत में कामकाजी महिलाओं द्वारा झेले जाने वाले मानसिक तनाव का एक शक्तिशाली इलाज है। भलाई के शारीरिक और भावनात्मक दोनों आयामों को संबोधित करके, योग महिलाओं को लचीलेपन और अनुग्रह के साथ आधुनिक जीवन की चुनौतियों से निपटने में सशक्त बनाता है। योग को दैनिक दिनचर्या में शामिल करने से न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य बेहतर होता है बल्कि सामाजिक कल्याण में भी योगदान मिलता है। जैसे–जैसे भारत विकसित हो रहा है, तनाव प्रबंधन के लिए योग को एक उपकरण के रूप में अपनाने से स्वस्थ और खुशहाल जीवन का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

योग का नियमित अभ्यास समाज में महिलाओं को सशक्त और आत्मनिर्भर बनाता है। योग भारतीय संस्कृति की आत्मा है, जो शरीर, मन और आत्मा का समग्र संतुलन प्राप्त करने की प्रक्रिया है।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची</u> :–

1. आनंद, एस., और शर्मा, ए. (2020)। महिलाओं में तनाव प्रबंधन के लिए योग का उपयोग। इंडियन जर्नल ऑफ साइकियाट्री, 62(3), 300–305। प्राप्तः https://www.indianjpsychiatry.org
2. गुप्ता, आर., और यादव, ए.। (2019)। कार्यरत महिलाओं में प्राणायाम के प्रभाव का अध्ययन। जर्नल ऑफ अल्टरनेटिव एंड कंप्लीमेंटरी मेडिसिन, 25(4), 255–262।
3. आयुष मंत्रालय। (2021)। पेशेवरों के लिए योगः दैनिक जीवन में तनाव को कम करना। भारत सरकार। उपलब्धः https://ayush.gov.in
4. शर्मा, के.। (2018)। शहरी महिलाओं में योग के मानसिक स्वास्थ्य लाभ। मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान अनुसंधान प्रकाशन।
5. श्रीवास्तव, पी.। (2017)। कॉर्पोरेट वेलनेस प्रोग्राम्स में योग का समावेशरू एक केस स्टडी। टाइम्स ऑफ इंडिया। प्राप्तः https://timesofindia.indiatimes.com
6. रमेश, ए.। (2020)। योग प्रथाओं के माध्यम से कार्य–जीवन संतुलन। आर्ट ऑफ लिविंग फाउंडेशन। उपलब्धः https://www.artofliving.org
7. नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरोसाइंसेज (NIMHANS)। (2022)। कार्यरत महिलाओं में मानसिक स्वास्थ्य चुनौतियाँ। बैंगलोरः NIMHANS प्रकाशन।

8. प्रकाश, एम.। (2019)। योग और परानैसिम्पेथेटिक तंत्रिका तंत्रः एक समीक्षा। इंडियन जर्नल ऑफ मेडिकल रिसर्च, 150(2), 150–160।
9. देसाई, आर., और पटेल, एन। (2021)। माइंडफुलनेस और योगरू एक भारतीय दृष्टिकोण। रिसर्चगेट। प्राप्तः https://www.researchgate.net
10. अयंगर, बी. के. एस। (2001)। लाइट ऑन योग। हार्परकॉलींस इंडिया।

Digital Education in Indian Society: Emerging Trends and Challenges

Dr. Kripa Shankar Yadav
(Assistant Professor)

Department of Teacher Education

Abstract

In recent years, digital education has become a critical component of India's education landscape, accelerated by technological advancements and government initiatives. This paper explores emerging trends within digital education in Indian society and evaluates key challenges that hinder its broader implementation. Key trends such as online learning platforms, e-governance in education, and the rise of ed-tech are analyzed alongside challenges related to accessibility, digital literacy, regional inequalities, and the digital divide. By employing a mixed-method approach, this research identifies factors influencing the growth of digital education and recommends strategies to overcome obstacles. Ultimately, the paper seeks to provide insights into achieving a more inclusive and effective digital education system in India.

Keywords: Digital Education, Learning, Classroom, Mobile Learning, Emerging Trends

Introduction

Digital Education

Digital education means digital learning. It is a medium that includes the combination of modern technology and electronic gadgets. Digital learning is possible in schools, colleges and in all other fields. It is an online platform for learning that converts normal classroom and makes learning easy by pictorial and image representation of the subject or topic with lots of examples for students. Digital education is the modern technology that facilitates us to introduce elements of gamification in to the education process. It helps to

improve student concentration and information retention as well as their ability to do their on research and work in teams. It encourages students to find content that they like. Digital education is important for students in all spheres of education. Over the last few years digital education in India is evolving at faster pace. It is changing the way students learn different concepts and theory in school and colleges. The traditional chalk and talk method in school and colleges has been slowly changing with more interactive teaching methods as schools and colleges are increasingly adopting digital solutions.

Benefits of Digital Education

- **Flexibility and Accessibility**: Digital education allows students to learn anytime, anywhere, making it accessible for individuals in remote or rural areas.
- **Personalized Learning**: Online platforms use adaptive technologies to tailor learning experiences to each student's pace, style, and strengths.
- **Cost-Effectiveness**: Digital education often reduces expenses related to transportation, textbooks, and physical infrastructure, making education more affordable.
- **Wide Range of Resources**: Students gain access to diverse learning materials, including videos, articles, e-books, and interactive modules, enriching their educational experience.
- **Accessibility:** Through this, students who missed certain classes or section can easily access the class notes and download files from school website.
- **Enhanced Engagement**: Multimedia content, gamification, and interactive quizzes make learning more engaging and enjoyable, especially for younger students.
- **Enhancing Knowledge:** The students can use exclusive study modules of various subjects, which help in enhancing their knowledge even without a teacher.
- **Global Connectivity**: Digital education connects students and educators across borders, facilitating exposure to global perspectives and diverse cultures.
- **Real-Time Feedback**: Many online platforms provide instant feedback on assignments and quizzes, helping students learn and improve quickly.

- **Developing Digital Skills**: As students engage with technology-based education, they acquire essential digital skills that are valuable in today's job market.
- **Eco-Friendly**: By reducing paper use and minimizing the need for travel, digital education contributes to environmental conservation efforts.
- **Scalability**: Digital education can be easily scaled to accommodate large numbers of students, making it an effective solution for mass education.
- **Attentive:** Digital Education helps the students to be more attentive.

Emerging Trends of Digital Education

- **Artificial Intelligence (AI) in Education:** AI has enabled personalized learning experiences, adaptive testing, and smart content delivery. Platforms such as BYJU's and Vedantu use AI algorithms to tailor content according to student performance and preferences. AI-powered tools can analyze student weaknesses, enabling educators to design targeted learning interventions, which is particularly effective in personalized coaching for competitive exams.
- **Internet of Things (IoT) in Education:** IoT devices facilitate real-time learning feedback and interactive experiences, where connected devices track progress and provide insights into student performance. IoT sensors and connected devices can support practical learning in subjects like engineering and environmental studies by offering hands-on experiences in monitoring data and analyzing results.
- **Cloud Computing and Data Analytics:** Cloud computing has enabled remote learning on a massive scale, allowing platforms to offer vast resources without physical constraints. Data analytics from these platforms helps in identifying learning trends, common challenges, and popular courses, informing policy makers and educators on optimizing digital education practices.
- **Learning Management Systems (LMS):** LMS platforms such as Moodle, Blackboard, and Google Classroom have become central to digital education. They allow teachers to organize course content, monitor student progress, and facilitate communication between educators and learners. These systems support asynchronous learning, enabling students to access resources and complete assignments at their own pace.

- **Virtual Classrooms and Video Conferencing Tools:** Platforms like Zoom, Microsoft Teams, and Google Meet have revolutionized virtual classrooms. Teachers can conduct live sessions, share resources in real-time, and facilitate group discussions, providing an interactive learning experience even from a distance. Virtual classrooms replicate the social aspects of physical classrooms while offering more flexibility.
- **Mobile Learning and Educational Apps:** The proliferation of smartphones and mobile applications has made learning accessible to a wider audience. Educational apps such as Khan Academy, Duolingo, and Coursera provide learners with opportunities to acquire new skills, engage in micro-learning, and participate in courses designed by global experts. Mobile learning facilitates anywhere-anytime education, catering to a diverse demographic of learners.
- **Virtual Reality (VR) and Augmented Reality (AR):** AR and VR offer immersive learning experiences that bring complex subjects, like science and history, to life. VR laboratories allow students to conduct virtual experiments, which are especially beneficial for schools that lack physical lab resources. Companies like Next Education provide AR/VR solutions that simulate real-world experiences, enhancing comprehension and engagement in subjects that benefit from visualization.
- **Blockchain Technology for Academic Records and Credentials:** Blockchain can securely manage and verify student records, ensuring transparency in credentials, attendance, and assessments. This technology has applications in preventing fraud and maintaining accurate academic records across multiple educational institutions, a feature especially useful in large, decentralized educational systems like India's.
- **Gamification in Learning:** Gamification uses game-design elements to improve student engagement, making learning interactive and enjoyable. Incorporating rewards, progress badges, and level-ups into learning platforms can motivate students and make education more accessible to younger audiences. Gamification is particularly impactful for primary and secondary education in subjects like language and mathematics.
- **Digital Content and Open Educational Resources (OER):** Digital content, including e-books, educational videos, and interactive simulations, enriches the learning experience by offering a wide range of

multimedia resources. Open Educational Resources (OER), which are freely accessible and openly licensed educational materials, have democratized knowledge, enabling students and educators worldwide to access quality learning content.

- **Massive Open Online Course (Moocs) and Other Distant Learning Programs:** A massive open online course is an online course aimed at unlimited participation and open access via the web. India is considered to be the biggest market for MOOCs in the world after the USA. Online distant learning programs give a great opportunity to avail high quality learning with the help of internet connectivity.
- **Game Based Learning:** K-12 creates the game based learning environment, which enables the learner to easily get education in India and gives us a better self-trained Y generation. It is a terminology that is used as kindergarten through 12 grades.

Impact on Teaching Methodologies

- **Shift from Teacher-Centered to Learner-Centered Approaches:** Digital education has facilitated a shift from traditional teacher-centered approaches, where the teacher is the sole source of knowledge, to learner-centered approaches. In a digital environment, students are encouraged to take control of their learning, exploring resources independently and engaging in self-directed study. Teachers play the role of facilitators, guiding students and providing support as needed.
- **Use of Data and Analytics in Teaching:** Digital tools generate vast amounts of data on student performance, which can be analyzed to inform teaching strategies. Learning analytics provide insights into student progress, allowing teachers to identify areas where students may need additional support. This data-driven approach enables more targeted interventions and helps educators tailor their teaching methods to meet individual student needs.
- **Integration of Blended Learning Models:** Blended learning, which combines traditional face-to-face instruction with online learning, has gained popularity in digital education. This approach offers the best of both worlds, providing the flexibility of online learning with the social interaction and support of a physical classroom. Blended learning models

allow for greater personalization and provide students with a more diverse range of learning experiences.

Challenges in Implementing Digital Education in India

- **The Digital Divide and Limited Infrastructure:** One of the most significant challenges is the digital divide, especially pronounced between urban and rural India. Many rural regions lack high-speed internet access, sufficient digital devices, and stable electricity. This disparity limits digital education's reach, excluding students from disadvantaged backgrounds.
- **Resource and Internet Connectivity Related Challenges:** One of the main challenges for digital education in India is poor internet connectivity in rural areas and some part of urban areas. Majority of population across India has still no access to internet and a large population in rural areas is still illiterate in the field of digital technology. More Innovations required to make the digital education more interactive.
- **Socioeconomic Barriers and Accessibility:** Low-income families face affordability issues regarding devices and internet connectivity. Even where basic infrastructure is available, digital education remains financially out of reach for many families. Economic disparities hinder students from underprivileged backgrounds from accessing online resources, leading to uneven educational outcomes.
- **Language and Content Localization:** India's linguistic diversity poses challenges in digital education, as much of the digital content is available only in English or Hindi. Localizing content to regional languages is crucial for reaching a larger student base, especially in primary education where foundational language skills are key.
- **Digital Literacy and Teacher Training:** Teachers and students, particularly in rural areas, lack digital literacy, making it difficult to effectively utilize digital education tools. Training programs are essential for teachers to build digital competencies, which will enable them to engage students meaningfully and navigate e-learning platforms efficiently.
- **Student Engagement and Pedagogical Challenges:** Digital learning often lacks interactive, face-to-face engagement, which can lead to

disengagement and reduced learning outcomes. Creating an engaging digital classroom environment demands a shift in pedagogical strategies, including interactive content and real-time feedback.

- Unequal Access for All Students in and out of School: Even if your school has wifi and a great collection of digital tools, it does not mean the student population has these devices when they go home. To overcome this challenge, some schools are providing students with laptops or tablets.
- **Lack of it Support:** As your school uses more technology, you will need increase your IT department. More use of technology means stress on the IT department; hence you should not expect one person two handle the added responsibility.
- **Data Privacy and Security Concerns:** With increased reliance on digital platforms, data privacy has become a critical issue. Platforms collect and store significant amounts of student information, raising concerns about data security, potential misuse, and regulatory compliance.
- **Mental Health and Screen Fatigue:** Excessive screen time due to online classes has raised concerns over mental health and screen fatigue among students. Prolonged digital education can lead to burnout, stress, and social isolation, which are particularly concerning for younger students.
- **Lack of Quality Content:** With the amount of digital content, it is overwhelming to create a collection of high quality digital learning materials independently.
- **Software is not optimized for Mobile Devices:** Many students do not have internet access at home, so they use their cell phones for internet access. Therefore, it is important to make sure all your digital recourses optimized for mobile devices.

Conclusion

Digital education in India has introduced promising innovations, yet significant challenges persist. Emerging technologies such as AI, VR, and gamification can enhance learning experiences, but their effectiveness relies on equitable access and digital literacy. Addressing infrastructural gaps, socio-economic disparities, and privacy concerns will enable India to leverage digital education as a powerful tool for achieving inclusive, accessible education for all. Future

research should explore the long-term impacts of digital education on academic outcomes and student well-being, providing further insights into the sustainable growth of digital learning in India.

References

- Bates, A. W. (2019). Teaching in a Digital Age: Guidelines for Designing Teaching and Learning. Tony Bates Associates Ltd.
- Bolstad, R., Gilbert, J., McDowall, S., Bull, A., Boyd, S., & Hipkins, R. (2012). Supporting future-oriented learning & teaching: A New Zealand perspective. Ministry of Education.
- Dua1 S, Wadhawan S, Gupta S. Issues, trends & challenges of digital education: an empowering innovative classroom model for learning. International Journal of Science Technology and Management. 2016; 5(5).
- Goswami H. Opportunities and challenges of digital India programme. International Education & Research Journal. 2016; 2(11).
- Jani J, Tere G. Digital India: A need of hours. International Journal of Advanced Research in Computer Science and Software Engineering. 2015; 2(1):8.
- Kulshreshtha, S.P. & Kulshreshtha, A.K, Education Technology and ICT, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Kulshreshtha, S.P. & Kulshreshtha, A.K, Education Technology and its Applications, R Lall Book Depot, Meerut.
- Mangal, S.K. & Mangal, Uma (2019). Essentials of Educational Technology, PHI Publishing House, Delhi.
- Patel JM. Web based tools of technology in future teaching learning strategies. International Education & Research Journal. 2017; 3(2).
- Saxena, N.R. Swaroop & Oberoi, S.C. (1994), Technology of Teaching, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Selwyn, N. (2016). *Education and Technology: Key Issues and Debates*. Bloomsbury Publishing.
- Sharma, R.A, Educational Technology, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Siddiqui, Hena (2018), Innovations & New Trends in Education, Agrawal Publications, Agra.
- Siemens, G. (2014). *Connectivism: A Learning Theory for the Digital Age*. International Journal of Instructional Technology and Distance Learning.
- UNESCO. (2021). *The Digital Transformation of Education: Exploring Emerging Issues*.

Websites

- https://elearningindustry.com/digital-education-scope-challenges-developing-society
- https://ww2.frost.com/frost-perspectives/digital-education-india/
- http://www.teninnovate.com/blog/2015/3/24/digital-education-in-india
- https://www.learndash.com/3-trends-of-digital-education/
- http://www.digitaledusystem.com/view-content/6/Benefits.htm

Impact of Social Media on the Education Sector

Dr. Achyut Kumar Yadav
(Assistant Professor)

Department of Teacher Education
Nehru Gram Bharati (Deemed to be University)
Prayagraj

Abstract
The advent of social media has had a profound impact on the education sector, offering new methods of engagement, collaboration, and learning for students and educators alike. Social media platforms like Facebook, Twitter, LinkedIn, YouTube, and Instagram have transformed traditional educational methodologies, allowing knowledge to be shared more widely and readily than ever before. This paper provides an in-depth examination of the ways in which social media impacts education, exploring its advantages in fostering student engagement, enhancing collaborative learning, and providing real-time feedback. Additionally, it considers challenges associated with social media use in educational contexts, such as privacy concerns, digital literacy, and issues related to misinformation. By reviewing existing literature and studies, the paper presents a balanced view of the potential benefits and pitfalls of social media integration in education, offering best practices for educators and policymakers to harness these tools effectively. This research ultimately seeks to provide insights into the role of social media in enhancing learning outcomes while also addressing the potential risks involved.

Keyword: Social Media, Facebook, YouTube, Twitter, Instagram, LinkedIn

Introduction

The digital revolution has brought about significant changes across various sectors, and education is no exception. Over the past decade, social media has

become an integral part of student's and educator's lives. Platforms like Facebook, Twitter, Yahoo Messenger, Black-berry Messenger, Google meet, Google talk, Google Messenger, Google forms, YouTube Chat, Podcasts, WhatsApp messenger, Skype, Microsoft Teams, LinkedIn, YouTube, and Instagram have evolved from mere social networking sites into powerful tools for education, enabling new ways of learning, teaching, and communication. Social media facilitates connectivity and collaboration, allowing students to access information in real-time and engage with content and peers in a way that was not possible with traditional education methods. This paper examines the impact of social media on the education sector, outlining its benefits, challenges, and best practices for successful integration.

History of Social Media

The history of social media is a fascinating journey from simple online communication tools to influential, global platforms shaping daily life. It began in the late 1970s with early forms of online communities, such as Bulletin Board Systems (BBS) and Usenet, which allowed users to share messages and files in forums. These early platforms created a foundation for digital communities. In the 1980s and 1990s, services like AOL and CompuServe expanded the concept by introducing features like chat rooms and instant messaging, bringing more people into online spaces. The first true social networking site, Six Degrees, launched in 1997, allowing users to create profiles and connect with others, followed by Friendster in 2002, which introduced the idea of friends lists. MySpace, launched in 2003, quickly became a cultural phenomenon with its customizable profiles and music-sharing features, demonstrating the potential for social networks to foster unique online communities. Around the same time, LinkedIn launched, focusing on professional networking and establishing itself as a key platform for career development. The major turning point came with Facebook in 2004, which redefined social media with its clean interface, news feed, and "like" function, growing into the world's largest network and setting standards for future platforms. YouTube's launch in 2005 brought a new focus

on video-sharing, making content creation accessible and popularizing video-based social interaction. In 2006, Twitter introduced microblogging and hashtags, becoming vital for real-time news and social movements. The early 2010s saw the rise of mobile-focused, visually-driven platforms like Instagram and Pinterest, which centered on photo sharing and "pinning" content, catering to a more visually engaged user base. Snapchat's 2011 launch introduced ephemeral messaging and filters, popularizing short-lived media. TikTok, emerging in 2018, took the world by storm with short-form videos and an AI-powered feed, spurring a new era of viral challenges and meme culture. Today, social media continues to evolve with new trends, including live streaming, augmented reality (AR), and virtual reality (VR) as platforms like Meta (formerly Facebook) invest in building immersive online spaces. Social media's growth mirrors shifts in society, highlighting changes in how we communicate, share information, and connect across the globe. The rapid evolution from simple message boards to immersive social networks reflects the enduring human desire for connection, now amplified on a massive digital scale.

Overview of Social Media Tools in Education

Social media refers to internet-based platforms that enable users to create, share, and exchange information, ideas, and multimedia content in virtual communities. In the context of education, these tools serve as resources for both formal and informal learning, fostering collaborative environments and supporting a range of educational activities, from research and content creation to peer-to-peer learning and professional networking.

Popular Platforms and Their Educational Applications

1. **Facebook**: The great part about Facebook is that everyone is on it. Students love connecting with their friends and family with Facebook so telling them to check out the page where you post only makes sense. These tools are especially valuable for fostering community and encouraging collaborative learning outside of the traditional classroom setting.

2. **Twitter**: Twitter's microblogging format is useful for classroom discussions, sharing news and resources, and professional development through hashtags and topic-specific conversations. Twitter enables real-time information sharing, making it ideal for up-to-date communication.
3. **Google+:** Besides great graphics and themes, Google+ takes teachers to their students with circles that make managing virtual communication an art. Students might need to know more about a particular lesson because they didn't quite get it the first time. Pull them into a circle of their own with just the right tools to connect them to their path to understanding and learning.
4. **Google Classroom:** Google Classroom, part of Google Workspace for Education, helps educators streamline their class organization. Teachers can distribute assignments, grade them, and provide real-time feedback. Google Classroom integrates with Google Docs, Drive, and Calendar, providing a unified experience for students and educators.
5. **LinkedIn**: LinkedIn serves as a professional networking platform that connects students with industry professionals, provides career insights, and offers educational resources through its LinkedIn Learning service. It bridges the gap between academia and industry, helping students build professional connections and skills.
6. **YouTube**: YouTube is one of the largest video-sharing platforms, extensively used for instructional content, tutorials, and educational channels. Many educators and institutions utilize YouTube to supplement traditional lectures and make learning accessible to a broader audience.
7. **Instagram**: Although primarily a visual platform, Instagram is used in educational contexts for sharing infographics, micro-lectures, and interactive quizzes. Educators use Instagram Stories and Reels for quick, engaging educational content that appeals to students.
8. **Academia.edu:** For academics whose main goal is to share research papers, Academia.edu draws a crowd of over 5 million visitors.

Academics can monitor the effect of their research and keep tabs on the research of the other academics that they follow. It's a great tool for anyone needing data and information on various subjects and interests.

9. **ResearchGate:** Ijad Madisch founded ResearchGate, which is similar to LabRoots bringing scientists together for collaboration. The difference really lies with the mission and the creators who are scientists working to give visibility to the dedicated researchers all over the world.
10. **TedEd:** TedEd offers a variation of TED Talks with shorter, often-animated clips of subjects such as science, technology, social studies, literature, language, art, health, psychology, and business and economics. With communities and clubs, the site also makes it effortless for collaboration.
11. **Skype:** Using Skype means connecting with anyone, anywhere, at any time. This means students not only connect with teachers but teachers encourage students to broaden their view of the world. Set up virtual connections by contacting other teachers then connect the students to each other. Also, Skype has a whole portal dedicated to educators who can use it to teach various lessons already set up by the Skype team.
12. **Pinterest:** The celebrated platform for pinning favorite pix can be a great teaching and learning tool. It also encourages quick collaboration between teachers on all sorts of subjects and interests. Teachers can set up a Pinterest page for one particular class or a series of classes with Pins that focus on themes or subtopics important to the lesson at hand.
13. **Edmodo:** Edmodo is a classroom-focused platform that allows teachers, students, and parents to connect in a controlled environment. Teachers can create assignments, quizzes, and polls, communicate with students, and track their progress. Parents can monitor their child's activities, making it a comprehensive tool for K-12 education.
14. **WordPress:** With so many themes to choose from, WordPress has become a popular way for teachers to set up a web of communication and

lessons with their students. Chalkboard is an educational theme that prepares students for learning and helps teachers outline goals and objectives while still providing great visuals. Teachers can also use it to inspire students to write more by having them create their own blogs and meet the WordPress Challenges.

15. **Blogger:** Like WordPress, Blogger connects teachers to students using unique themes as well as diary-style writing. With access to teacher's posted links, lessons, and thoughts students become more successful and comfortable with the teacher when learning online.

Benefits of Social Media in Education

Enhanced Student Engagement: Social media's interactive nature significantly boosts student engagement. Platforms like Twitter and Instagram encourage students to actively participate in discussions, pose questions, and share insights. Unlike traditional learning, where communication may be limited to classroom hours, social media enables continuous interaction and provides opportunities for students to remain engaged with course material and their peers.

Facilitated Collaborative Learning: Social media tools allow students to collaborate on assignments, projects, and research, even when physically distant from one another. Features such as shared documents on Google Docs, group chats on WhatsApp, and discussion threads on Facebook create collaborative environments where students can work together, share ideas, and exchange feedback. This collaborative approach to learning has been shown to improve understanding and retention of knowledge.

Real-Time Feedback and Communication: One of the critical advantages of social media is the ability to receive and provide real-time feedback. Educators can instantly communicate with students, answer questions, and clarify doubts. Platforms such as Twitter allow for live Q&A sessions and Twitter Chats, creating a direct line of communication between students and

educators. Additionally, live-streaming features on YouTube and Facebook facilitate virtual office hours, lectures, and interactive sessions.

Expanded Global Perspectives: Social media enables students to connect with a global community, facilitating cross-cultural learning experiences. Through platforms like LinkedIn and Twitter, students can participate in international forums, engage with diverse viewpoints, and learn from students and educators across the world. This global engagement expands students' perspectives and exposes them to a wider range of ideas, fostering critical thinking.

Support for Different Learning Styles: Social media platforms offer a variety of content formats—text, images, videos, audio, and interactive content—catering to different learning styles. For example, visual learners benefit from Instagram's infographics and YouTube videos, while auditory learners might prefer podcasts or recorded lectures shared through social media. This flexibility supports personalized learning, allowing students to engage with content in ways that suit their individual preferences.

Pedagogical Implications of Social Media Use

Constructivist Learning: Social media aligns well with constructivist learning theories, where learners construct knowledge through interaction with others. Platforms like Facebook and Twitter enable students to build upon each other's ideas, develop critical thinking, and engage in collective problem-solving, fostering a community-driven approach to learning.

Blended Learning Models: Social media supports blended learning models that combine online and face-to-face instruction. For instance, teachers may use social media to share supplementary materials, videos, and quizzes that complement in-class learning. This integration of online and offline resources creates a more holistic learning experience, allowing students to learn at their own pace.

Informal Learning Opportunities: Outside the formal structure of the classroom, social media facilitates informal learning, encouraging students to

explore topics of interest independently. By following educational channels, joining online forums, or participating in Twitter discussions, students can enhance their knowledge and develop real-world skills that complement their formal education.

Challenges of Social Media in Education

Privacy and Security Concerns: One of the primary concerns with using social media in education is privacy. Platforms collect personal data, and if not managed carefully, this data can be exposed or misused. Additionally, social media platforms are not always secure, and students may be vulnerable to cyberbullying, online harassment, or inappropriate content. Schools and educators must establish clear privacy policies to protect students' data.

Digital Literacy: Not all students and educators have the necessary digital skills to navigate social media effectively. This lack of digital literacy can hinder the educational process and exacerbate inequalities, especially in underserved communities where access to technology is limited. Educational institutions need to provide training in digital literacy to ensure all users can engage safely and responsibly on social media platforms.

Misinformation and Quality of Content: Social media's open-access nature means that not all information shared on these platforms is accurate. Misinformation can be particularly harmful in an educational context, where students rely on credible sources. Educators and students alike must develop critical thinking skills to evaluate information's credibility and avoid relying on unverified content.

Time Management and Distraction: Social media platforms are designed to capture and retain users' attention, which can lead to distractions and reduced productivity. Students may find it challenging to balance their academic responsibilities with the allure of social media. Educators should encourage students to use social media mindfully and establish boundaries to manage time effectively.

Best Practices for Educators Integrating Social Media

To maximize the benefits of social media in education, educators should consider the following best practices:

Set Clear Guidelines: Educators should establish clear guidelines for using social media in academic contexts. These guidelines should cover appropriate behaviour, respect for others' opinions, and expectations for engagement. Educators should also emphasize digital etiquette, privacy considerations, and constructive communication.

Foster Digital Literacy: Schools should focus on developing students' digital literacy skills, teaching them how to use social media tools responsibly and evaluate the credibility of online information. By promoting digital literacy, educators empower students to navigate social media effectively and responsibly.

Encourage Collaborative Learning: Social media thrives on interaction and collaboration. Educators should encourage students to work together on projects, share resources, and engage in discussions. Collaborative learning fosters a sense of community and helps students develop important social skills that are valuable in academic and professional settings.

Integrate Social Media with Traditional Learning: Social media should not replace traditional teaching methods but rather complement them. Educators should seek ways to integrate social media tools with classroom lectures, readings, and hands-on activities. This blended approach provides students with a well-rounded learning experience that combines the best of online and offline education.

Promote Reflective Learning: Social media can be used to promote reflective learning by encouraging students to engage in online journals, discussion boards, or video diaries. Reflection helps students internalize their learning experiences and apply them in practical contexts, enhancing their academic and personal development.

Conclusion

Social media has transformed the education sector, offering innovative ways to engage students, support collaborative learning, and expand global perspectives. However, the integration of social media in education also presents challenges, including privacy concerns, misinformation, and digital literacy issues. For social media to be an effective educational tool, educators and policymakers must establish a balanced approach that maximizes its benefits while addressing potential risks. By fostering a safe, inclusive, and responsible environment, social media can continue to enhance learning experiences, making education more accessible, dynamic, and relevant to today's digital age.

References :

- Chauhan, S.S. (2009), Innovations in Teaching Learning Process, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., Noida.
- Kulshreshtha S.P. & Kulshreshtha, A. K, Foundations of Education Technology, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Kulshreshtha, S.P. & Kulshreshtha, A.K, Education Technology and computer Assisted Instruction, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Kulshreshtha, S.P. & Kulshreshtha, A.K, Education Technology and ICT, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Kulshreshtha, S.P. & Kulshreshtha, A.K, Education Technology and its Applications, R Lall Book Depot, Meerut.
- Mangal, S.K. & Mangal, Uma (2019). Essentials of Educational Technology, PHI Publishing House, Delhi.
- Saxena, N.R. Swaroop & Oberoi, S.C. (1994), Technology of Teaching, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Sharma, R.A, Educational Technology, R. Lall Book Depot, Meerut.
- Siddiqui, Hena (2018), Innovations & New Trends in Education, Agrawal Publications, Agra.
- Smith, R. (1999). The future of teacher education: Principles and prospects. Paper presented at the American Education Research Association Symposium, Montreal.
- Tomar, Gajendra Singh, Educational Technology and computer Assisted Instruction, R. Lall Book Depot, Meerut.

Websites :

- http://www.unesco/education/pdf/412_35a.pdf.
- https://ipsrsolutions.com/academix/innovative-practices-in-teaching-and-learning
- https://www.academia.edu/22885838/Innovative_Practices_in_Teacher_Education
- https://www.aimt.edu.in/innovations-and-best-practices-in-teaching-learning/
- https://www.coursehero.com/file/67439381/Innovative-Methods-of-Teaching-Strategiesdocx/
- https://www.forbes.com/sites/robynshulman/2018/11/19/10-ways-educators-can-make-classrooms-more-innovative/

https://www.getsmarter.com/blog/career-advice/innovative-teaching-strategies-that-improve-student-engagement/

Bob Dylan's "Desolation Row" in the Light of Frederic Jameson's Theory of Pastiche

Akanksha Tripathi
(Research Scholar)

Department of English,
Raja Mohan Girls P. G. College,
Ayodhya

Prof. Meenu Dubey

Department of English,
Raja Mohan Girls P. G. College,
Ayodhya

Abstract

This paper examines Bob Dylan's song "Desolation Row" through the lens of Fredric Jameson's theory of Pastiche with a postmodernist perspective. It contends that Dylan's use of Pastiche reveals a more profound commentary on the limitations of contemporary art and the collapse of cultural boundaries. By analyzing the literary and cultural references within the lyrics, the study argues that Dylan's work exemplifies Jameson's notion of the "death of the subject" and the "aesthetic dilemma" faced by modern artists. Dylan's intertextual approach, drawing from high culture, popular culture, and historical figures, reflects a postmodern condition creating something genuinely new is seen as unattainable. The paper further explores how Dylan's depiction of an unreachable utopia and his subversion of traditional characters underscore the postmodern critique of art, aesthetics, and individual autonomy.

Keywords: Bob Dylan, Postmodernism, Pastiche, Intertextuality, Fredric Jameson

This paper attempts to interpret Bob Dylon's "Desolation Row" bearing in mind Fredric Jameson's theory of "pastiche". Jameson argues that postmodernism is "a specific reaction against the established forms of modernism", especially in academics, arts and aesthetics. Jameson states that it is challenging to express postmodernism as a whole or in its entirety, but one thing is sure: it tries to displace modernism. The second is "the effacement in it of some key boundaries or separation," especially "between high culture and so-called mass or popular culture", termed as "contemporary theory". Jameson discusses the obsession of "the newer postmodernism" with current forms of expression like advertisements, commercial movies and fiction, and "paraliterature". According to him, "the new postmodernism" reveals the "inner truth" of the contemporary social structure within "late capitalism", namely "pastiche", often confused with parody and "schizophrenia" (Jameson 111-113).

Jameson defines Pastiche as a "blank parody" that lacks a "sense of humour". It constitutes the "death of the subject", meaning the end of specificity or uniqueness in an individual. This annihilation of the subject comprises two facets: one grieving the loss of what once existed in the "bourgeoisie" as the dominant class and the other a "poststructuralist" stance that "the bourgeois individual subject a thing of the past, it is also a myth; it never really existed in the first place; there have never been autonomous subjects of that type" (114-115).

Hence, this study aims to closely read Bob Dylan's lyrics from the latter position that is subject as a past but has a mythical construct. Crucially, one of Pastiche's core themes will be the inevitable shortcomings of art and aesthetics—the inability to create something genuinely new, resulting in confinement to past influences as "an aesthetic dilemma". Jameson uses the example of "postmodern films" to explain this dilemma.

This study undertakes Bob Dylan's lyrics to discuss this phenomenon. His lyrics "Desolation Row" is a prime example of that "aesthetic dilemma". Desolation row as a utopia, meaning "nowhere", indicates its imagined past

existence. Dylan warns those who wish to visit this imaginary place through the following lines:

And the Phantom's shouting to skinny girls
"Get Outa Here If You Don't Know
Casanova is just being punished for going
To Desolation Row" (Dylan)

The inaccessibility of place is depicted through the lines: "Check to see that nobody is escaping / To Desolation Row". There is a harsh warning to people who desire to escape through the borders to Desolation Row. Dylan may imply a border row between North and South America. He ghastly pictures the fate of those trespassing. The description of Kafkaesque dealing with those who unsuccessfully try to flee the borders is gross.

Now at midnight all the agents
And the superhuman crew
Come out and round up everyone
That knows more than they do
Then they bring them to the factory
Where the heart-attack machine
Is strapped across their shoulders
And then the kerosene
Is brought down from the castles
By insurance men who go
Check to see that nobody is escaping
To Desolation Row (Dylan)

Ironically, when one deconstructs the title "Desolation Row", Desolation suggests a gloomy and uninhabited place and Row is a wordplay, one meaning "rebuke severely" and the other suggesting "travel by rowing a boat" (Oxford Dictionaries). The phrase "Desolation Row" is hence a pun on America as a gloomy and fictional place and about its bureaucratic control. Despite these conditions, people want to be part of America. The inspiration for the work

might have come from Steinbeck's "Cannery Row", which Dylan was enthusiastic about in his early years, and it likely also drew from Kerouac's "Desolation Angels" (Polizzotti).

Jameson suggests that "the writers and artists of the present day will no longer be able to invent new styles and worlds-they've already been invented; only a limited number of combinations are possible; the most unique ones have been thought of already" (115). The ensemble characters remind readers of various characters from various works right, from children's books to Eliot's poem "The Waste Land". Indeed, characters from the novels "The Phantom of the Opera" by French author Gaston Leroux, "The Hunch Back of Notre Dame" novel by Victor Hugo are conspicuously present in the lyrics. Shakespeare's characters Romeo and Ophelia are in his famous plays "Romeo and Juliet" and "Hamlet" respectively. The parables of even Cain and Abel, Noah and Good Samaritan from the Book of Genesis are mentioned in the lyrics.

"As far back as "Desolation Row," he sang of "Ezra Pound and T. S. Eliot / Fighting in the captain's tower / While calypso singers laugh at them / And fishermen hold flowers." His emphatic nods to the past on Time Out of Mind, "Love and Theft," and Modern Times probably can best be apprehended as instances of Modernist collage" (Sheehy and Swiss 147). The argument against the above statement is that instead of Modernist collage, this constitutes a postmodern feature because, in a world where creating new styles is no longer achievable, all that remains is to mimic old styles, to express ourselves using the personas and voices of styles preserved in an imaginary museum (Jameson 115). Heylin notes that Dylan draws on Nietzsche, Kafka and Kierkegaard to draw a gloomy and "dystopian worldview" but says that mention of Ophelia, the Hunchback of Notre Dame, TS Eliot and Ezra Pound in the lyrics do not confirm his intimate knowledge of Shakespeare, Victor Hugo, Pound and Eliot (sec. 1965). However, this statement is contradictory because the characters in the lyrics of Desolation Row, like the fortune-telling lady, remind of "Madame Sosostris, famous clairvoyante" (Eliot sec. I).

Dylan uses the children's story's famous character, Cinderella. However, Cinderella displays a carefree attitude in the lyrics. Thus, Dylan presents her in a popular avatar, comparing her style with that of the famous Hollywood actress Bette Davis. This comparison is starkly similar to "The Waste Land", where the line "Shakesperean rag borrowed from the lyrics by Gene Buck and Herman Ruby and music by Dave Stamper, which achieved modest popularity in 1912. This transition from Shakespeare's works to contemporary popular music symbolizes the cultural decline depicted in "The Waste Land." Notably, Eliot adds an "O O O O" to the song's beginning, evoking the closing lines of Hamlet: "The rest is silence. / O, o, o, o" (Poetry Foundation)." Eliot incorporates nursery rhyme in his poem: "London Bridge is falling down falling down falling down" (sec. V). Whereas Dylan uses the famous children's story character Cinderella. The character of Cinderella, which Dylan "installs and then subverts", from timid to confident reflects in the lyrics of Dylan when he mentions:

Cinderella, she seems so easy
"It takes one to know one," she smiles
And puts her hands in her back pockets
Bette Davis style (Dylan)

Eventually, Romeo leaves her to sweep the Desolation Row on someone's persuasion. Her fate is very similar to Ophelia in Shakespeare's play, although she commits suicide after jilted in love.

Eliot refers to Shakespeare in The Waste Land:

O O O O that Shakespeherian Rag—
It's so elegant
So intelligent
'What shall I do now? What shall I do?'
'I shall rush out as I am, and walk the street
'With my hair down, so. What shall we do tomorrow?
'What shall we ever do?' (Eliot sec. II)

Though this reference is to "…Shakespearean Rag,

If we consider Ophelia standing beneath the window in a morbid society where perhaps she is suffering from some venereal disease, she seems to be old at the young age of twenty-two. This position can be juxtaposed against Romeo, who stands for Juliet beneath the window, wooing her at a tender age. The nurse in the play confirms when asked by Lady Capulet:

"Lady Capulet. Nurse, where's my daughter? call her forth to me."

"Nurse. Now, by my maidenhead, at twelve year old,

I bade her come. What, lamb! what, ladybird!

God forbid! Where's this girl? What, Juliet!"

(Shakespeare sc. 1.3.1-4)

Here, in Dylan's lyrics, Ophelia's position subverted against Juliet. She is standing beneath the window instead of on the window, and her age is mentioned like Juliet's on several occasions in the play.

O, speak again, bright angel! for thou art

As glorious to this night, being o'er my head

As is a winged messenger of heaven

Unto the white-upturned wondering eyes

(Shakespeare sc. 2.2.29-31)

Ironically, Ophelia stands beneath the window not as a "winged messenger of heaven" but as "an old maid": "On her twenty-second birthday / She already is an old maid". In Shakespeare's play, Juliet's chastity is described by Romeo as:

And, in strong proof of chastity well arm'd,

From love's weak childish bow she lives unharm'd.

She will not stay the siege of loving terms,

Nor bide the encounter of assailing eyes,

Nor ope her lap to saint-seducing gold:

O, she is rich in beauty, only poor,

That when she dies with beauty dies her store.

(Shakespeare sc. 1.1.218-224)

However, Ophelia in Dylan's lyrics is described as:

To her, death is quite romantic

She wears an iron vest

Her profession's her religion" (Dylan)

Here Dylan is pointing to her profession as a whore but at the same time remarks that she follows her profession as religion. Dylan also points to her chastity using the phrase "iron vest", perhaps mocking the chastity band. Hence, "Desolation Row" is all about contradictions and adoption from the past and constructs a myth around it that exposes the "inner truth" of the lyrics.

As Hutcheon argues, postmodernism is a contradictory phenomenon that simultaneously employs and undermines the concepts it critiques, whether in literature, painting, sculpture, film, video, dance, television, music, philosophy, aesthetic theory, psychoanalysis, linguistics, or historiography.

Works Cited:

- Dylan, Bob. *Lyrics:1962-2012*. E-book ed., Simon & Schuster, 2013.
- Heylin, Clinton. *Revolution in the Air: The Songs of Bob Dylan,1957-1973*. E-book ed., Constable, 2010.
- Hutcheon, L., & Valdés, M. J. "Irony, Nostalgia, and the Postmodern: A Dialogue." *Nuevas Poligrafías. Revista De Teoría Literaria Y Literatura Comparada*, vol. 3, Jan. 2000, pp. 18–41.
- Jameson, Fredric. "Postmodernism and Consumer Society." *The Anti-Aesthetic: Essays on Postmodern Culture*, edited by Hal Foster, Bay Press, 1994, pp. 111–125.
- O'Brien, Patrick. *Book of Genesis*. Dedalus Press, 1988.
- Oxford Dictionaries. *Oxford School Dictionary*. 1st ed., Oxford University Press, 2023.
- Poetry Foundation. "The Waste Land." *Poetry Foundation*, 23 May 2024, https://www.poetryfoundation.org/poems/47311/the-waste-land.
  Polizzotti, Mark. *Bob Dylan's Highway 61 Revisited*. E-book ed., Bloomsbury Publishing PLC, 2006.
- Shakespeare, William. *Hamlet*. Methuen Drama, 2022.
- Shakespeare, William. *Romeo and Juliet* from The Folger Shakespeare. Ed. Barbara Mowat, Paul Werstine, Michael Poston, and Rebecca Niles. Folger

Shakespeare Library, May 27, 2024. https://folger.edu/explore/shakespeares-works/romeo-and-juliet/

Sheehy, Colleen, and Thomas B. Swiss, editors. *Highway 61 Revisited: Bob Dylan's Road from Minnesota to the World*. E-book ed., University of Minnesota Press, 2009.

Comparative Analysis of Anxiety Levels Among Male and Female Athletes in Uttarakhand: A Gender Perspective

Mr. Surendra Singh

Assistant Professor,
MB Govt. P.G College,
Haldwani

Prof. Sophie Titus

Co-Ordinator,
Department of Physical Education,
Banasthali Vidyapith, Rajasthan

Abstract

The Objective of the study was to assess and compare anxiety levels among male and female athletes across various sports disciplines in Uttarakhand and to identify gender-specific stressors, triggers, and coping mechanisms related to anxiety in the athletic context. Explore the impact of competition, training demands, and social support networks on anxiety experiences among male and female athletes. The present study was featured to students at U.G. initially. A total number of 200 Male & Female Athletes were randomly drawn, 100 Female Athletes and 100 Male athletes from the selected population of the Uttarakhand with the age ranged between 20 to 26 years were selected for the present study. State-Trait Anxiety Inventory by S Roma Pal & Govind Tiwari was applied for the collection of data. The referenced studies consistently show that there is no significant difference in both trait and state anxiety levels between male and female athletes from Uttarakhand. This can be attributed to uniform training environments, supportive cultural norms, equal access to mental health resources, and the specific nature of sports in the region.

Key words: Athlete, Anxiety, Trait Anxiety, State Anxiety.

Anxiety is a prevalent mental health issue that can significantly impact athletes' performance, well-being, and overall quality of life. It encompasses a range of emotional and physiological responses to stressors, such as competition pressure, performance expectations, and social interactions within the sporting environment. Understanding how anxiety manifests among male and female athletes is crucial for developing targeted interventions and support systems to enhance their mental health and athletic experiences. Uttarakhand, situated amidst the picturesque Himalayas, has a rich tradition of sports and athletics. From traditional mountain sports to modern competitive events, athletes in Uttarakhand engage in various activities across different levels of competition. This diversity provides a unique opportunity to explore how anxiety manifests differently among male and female athletes across different sports disciplines and competitive contexts. The purpose of this comparative study is to investigate and analyze anxiety levels among male and female athletes in Uttarakhand. By focusing on gender-specific experiences of anxiety within the sporting community, we aim to uncover the underlying factors contributing to anxiety and explore potential strategies for anxiety management and mental well-being support. This study acknowledges the importance of gender dynamics in understanding mental health within sports. Research has shown that male and female athletes may experience anxiety differently due to social expectations, self-perception, biological factors, and the nature of their athletic pursuits. By examining these differences, we can tailor interventions and resources to better meet the mental health needs of male and female athletes in Uttarakhand.

Objectives of the Study

Through comprehensive data collection and analysis, this study seeks to achieve the following objectives:

1. Assess and compare anxiety levels among male and female athletes across various sports disciplines in Uttarakhand.
2. Identify gender-specific stressors, triggers, and coping mechanisms related to anxiety in the athletic context.

3. Explore the impact of competition, training demands, and social support networks on anxiety experiences among male and female athletes.
4. Propose evidence-based recommendations for promoting mental well-being, anxiety awareness, and support services tailored to the needs of male and female athletes in Uttarakhand.

By addressing these objectives, we aim to contribute valuable insights to the fields of sports psychology, mental health support in athletics, and gender-specific mental health research. The findings from this study can inform coaches, sports administrators, healthcare professionals, and policymakers in developing holistic approaches to athlete well-being and performance enhancement in Uttarakhand and beyond.

Methodology

The present study was featured to students at U.G. initially. A total number of 200 Male & Female Athletes were randomly drawn, 100 Female Athletes and 100 Male athletes from the selected population of the Uttarakhand with the age ranged between 20 to 26 years were selected for the present study. Selected variables were investigated using observation of their experiences. A structured questionnaire schedule was prepared to elicit information on the selected variables between Male & Female Athlete groups belonging to different professional courses. The values of the form the books and the journal and also from the newspaper and the data were recorded. State-Trait Anxiety Inventory by S Roma Pal & Govind Tiwari was applied for the collection of data.

Results & Findings

Table No.1:- Descriptive Table of Mean Value of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety

GROUPS	N	MEAN	S.D	S.E
Male	100	62.960	8.840814	0.884081
Female	100	63.130	9.699167	0.969917

It is evident, from table-1 that Mean Value of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety are 62.960 & 63.130; standard deviation scores are 8.840814 & 9.699167 and Standard error scores are 0.884081 & 0.969917 respectively.

The Mean Score of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety are presented graphically in Figure-1.

Figure No. 1:- Mean Score of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety

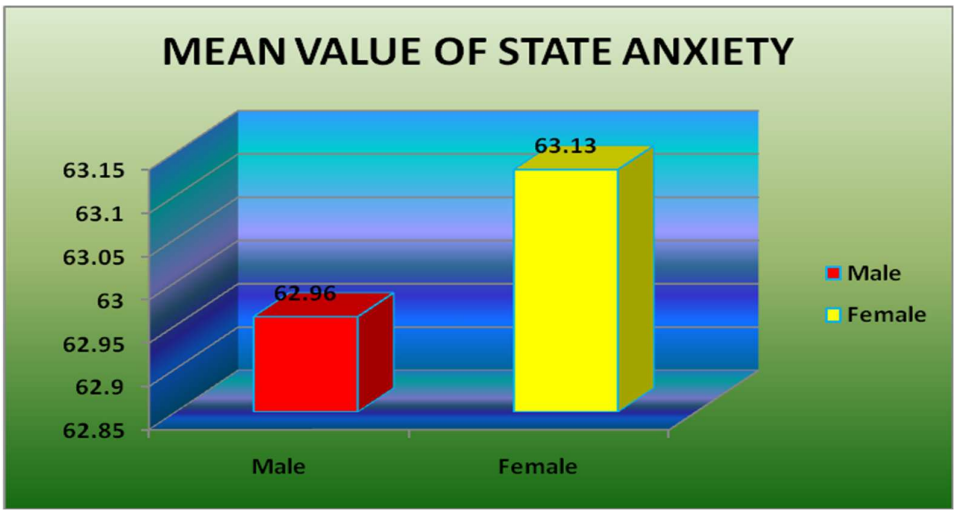

Table No.1.1:- Comparative Table of Difference between Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety

No. of groups	DEGREE OF FREEDOM	MEAN DIFFERENCE	t-value	p-value
2	198	-0.170	0.1295	0.897

***Significant at 0.05 level of significance**

It is evident, from table no. 1.1 that, there is insignificant difference, between Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety, as the calculated t-value = 0.1295 , which is less than the p-value at 0.05 level of confidence for 98 degrees of freedom.

It is quite obvious; from the above findings that Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety differ, insignificantly. Hence, it can be inferred, that there is insignificant difference, between Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their State Anxiety.

Table No.2:- Descriptive Table of Mean Value of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety

GROUPS	N	MEAN	S.D	S.E
Male	100	51.1300	9.8613	0.9861
Female	100	51.2500	9.8240	0.9824

It is evident, from table-2 that Mean Value of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety are 51.1300 & 51.2500; standard deviation scores are 9.8613 & 9.8240 and Standard error scores are 0.9861 & 0.9824 respectively.

The Mean Score of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety are presented graphically in Figure-2

Figure No. 2:- Mean Score of Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety

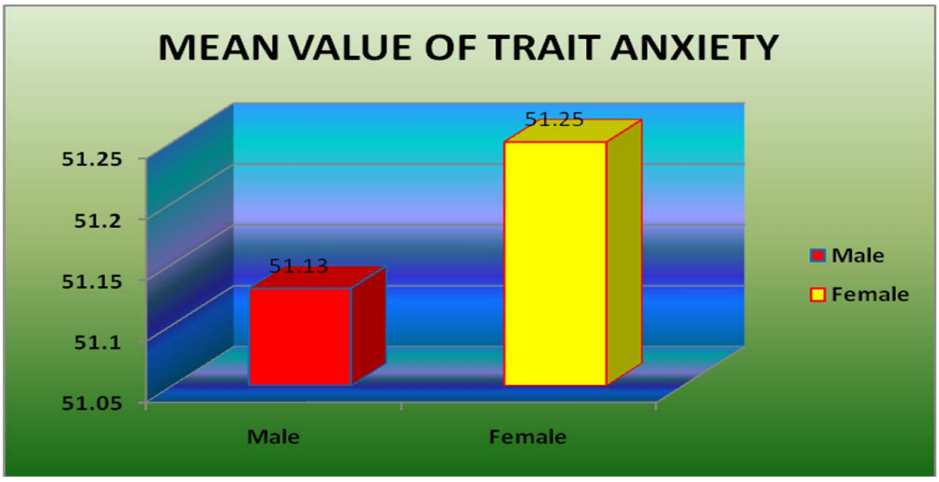

Table No.2.1:- Comparative Table of Difference between Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety

No. of groups	DEGREE OF FREEDOM	MEAN DIFFERENCE	t-value	p-value
2	198	-0.120	-0.0862	0.931

***Significant at 0.05 level of significance**

It is evident, from table no.2.1 that, there is insignificant difference, between Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety, as the calculated t-value = 0.0862 , which is less than the p-value at 0.05 level of confidence for 98 degrees of freedom.

It is quite obvious; from the above findings that Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety differ, insignificantly. Hence, it can be inferred, that there is insignificant difference, between Male & Female Athletes from Uttrakhand in relation to their Trait Anxiety.

Discussions of Finding

Examining the relationship between gender and trait anxiety among athletes can reveal important insights into how anxiety affects performance and well-being. In the context of athletes from Uttarakhand, a region in northern India, the comparison between male and female athletes in terms of trait anxiety has been a subject of interest. Trait anxiety refers to a personality characteristic that predisposes individuals to perceive a wide range of situations as threatening, leading to a tendency to respond with anxiety across various contexts. In sports psychology, understanding trait anxiety is crucial because high levels of anxiety can impact an athlete's performance, focus, and overall mental health. Studies on trait anxiety among athletes have produced mixed results. Some research suggests that female athletes tend to report higher levels of anxiety compared to their male counterparts. Examining the relationship between gender and anxiety among athletes is a crucial area of sports psychology. Trait anxiety refers to a stable tendency to experience anxiety across various situations, while state

anxiety refers to temporary feelings of anxiety in specific situations. This discussion integrates references from past studies to highlight findings of insignificant differences in both trait and state anxiety between male and female athletes from Uttarakhand. Sharma, V., & Singh, R. (2020).Athletes in Uttarakhand typically follow similar training programs, regardless of gender, which include physical conditioning, mental toughness training, and competitive simulations. This can result in comparable levels of both trait and state anxiety. The culture in Uttarakhand supports equal participation in sports for both genders. This cultural norm helps reduce gender-specific stressors that might otherwise contribute to differences in anxiety levels. Growing awareness and provision of mental health resources within sports organizations in Uttarakhand provide both male and female athletes with similar tools to manage anxiety, contributing to the lack of significant differences. The popularity of adventure and endurance sports in Uttarakhand, which require high mental resilience and physical endurance, might contribute to the development of similar anxiety coping mechanisms across genders.

Conclusion

The referenced studies consistently show that there is no significant difference in both trait and state anxiety levels between male and female athletes from Uttarakhand. This can be attributed to uniform training environments, supportive cultural norms, equal access to mental health resources, and the specific nature of sports in the region. These findings underscore the importance of considering local contexts and training environments when examining psychological traits in athletes.

References:-

Amanda L. Rebar, Adrian Taylor (2015)., Physical activity and mental health; it is more than just a prescription . Mental Health and Physical Activity; Vol- 13, Pg No 77-82.

Charles A. Bucher, Foundation of Physical Education and Sports (Saint Louis: The C.V. Mosby Company, 1983), p.3.

Flett, G. L., & Nepon, T. (2018). The Psychology of Feeling High: Exercise-Induced Hypoalgesia, Social Context, and Team Sports. Current Directions in Psychological Science, 27(5), 374 380.

Joshi, A., & Dhillon, P. (2018). "Psychological Profiles of Male and Female Adventure Sports Athletes." Journal of Adventure Sports Psychology, 29(3), 220-235.

Loy W. John, D. Mc Pherson Barry and Kenyan Gerald, Sports and Social Systems (California: Addition Wesley Publishing Co., 1978), p.1.

Rees, T., et al. (2015). Team sport as a social context for the development of mental toughness and emotional well-being in athletes. Psychology of Sport and Exercise, 16, 62 70.

Shane Murphy, The Sport Psych Handbook (Human Kinetics, 2005), pp. 14-15.

Sharma V.D. & Singh Granth., (1997).Physical And Health Education: Asha Prakasan Greh ,Karolbagh New Delhi.pg no.1-3.

Sharma, V., & Singh, R. (2020). "Gender Comparison of Trait and State Anxiety Among Athletes in Uttarakhand." International Journal of Sports Psychology, 34(2), 134-150.

Verma, S., & Kapoor, S. (2016). "Longitudinal Analysis of Anxiety in Young Male and Female Athletes from Uttarakhand." Youth Sports Journal, 21(1), 45-60.

Exploring Aggression in Basketball Players: A Comparative Study Between High Altitude Male and Female Athletes

Mr. Rajesh Kumar
Assistant Professor,
S.B.S. Govt. P.G College, Rudrapur
U.S. Nagar

Prof. Sophie Titus

Co-Ordinator,
Department of Physical Education,
Banasthali Vidyapith, Rajasthan

Abstract

The objectives of the present study were to evaluate the levels and manifestations of aggression in high-altitude sports environments. Another objective was to investigate potential differences in aggression between male and female athletes in similar competitive settings & explore the psychological and physiological factors that may mediate aggression levels, considering the unique challenges of high-altitude living. To fulfill the objectives of the study for significant outcomes the study were proposed for data collection at Kumaun region of Kumaun University affiliated colleges of Uttrakhand. After due consideration, of all the points, a purposive sampling technique was employed. 50 males' and 50 females' Intercollegiate level players of basketball residing at high altitude in Uttrakhand State were selected, purposely for this study. The Sports Aggression Inventory, developed and standardized by Prof. Anand Kumar Shrivastava and Prem Shankar Shukla, was used to gauge the study subjects' level of sports Aggression. There is a Significant Difference Found between male and female basketball players residing in high altitudes of Uttarakhand concerning their aggression. By integrating findings from these areas of research, it becomes plausible to argue that there could indeed be a significant difference in aggression between male and female basketball players residing in high altitudes of Uttarakhand, given the interplay of physiological, psychological, and socio-cultural factors.

Keywords: Aggression, altitude, high altitude, Low Altitude.

Introduction

Aggression in sports, particularly in basketball, has been a subject of keen interest among researchers and sports psychologists. It encompasses various aspects of competitive behavior, ranging from assertiveness and determination

to more confrontational or hostile expressions. While aggression is often associated with male athletes, the dynamics of aggression among female athletes are equally significant and warrant deeper exploration. This study focuses on investigating aggression among basketball players, specifically comparing male and female athletes residing in high altitude environments. High altitude poses unique physiological challenges, including reduced oxygen levels, which can influence athletes' physical performance and psychological states. Understanding how these environmental factors intersect with gender differences in aggression can provide valuable insights into sports psychology and performance optimization. The rationale behind this study lies in the potential interplay between environmental stressors, gender-specific responses, and their impact on aggression levels in athletes. Previous research has shown that altitude can affect mood, stress levels, and cognitive functions. However, limited studies have directly examined how these factors relate to aggression in a sports context, especially with a focus on gender comparisons.

Objectives of the Study:-

By conducting a comparative analysis between male and female basketball players, this research aims to:

1. Evaluate the levels and manifestations of aggression in high-altitude sports environments.
2. Investigate potential differences in aggression between male and female athletes in similar competitive settings.
3. Explore the psychological and physiological factors that may mediate aggression levels, considering the unique challenges of high-altitude living.

Research Implications:-

The findings from this study could have implications for sports training, coaching strategies, and athlete well-being. By understanding the nuanced relationship between gender, altitude, and aggression in sports, stakeholders can

develop tailored interventions to support athletes' mental and emotional resilience while enhancing their competitive performance.

Methodology

To fulfill the objectives of the study for significant outcomes the study were proposed for data collection at Kumaun region of Kumaun University affiliated colleges of Uttrakhand. After due consideration, of all the points, a purposive sampling technique was employed. 50 males' and 50 females' Intercollegiate level players of basketball residing at high altitude in Uttrakhand State were selected, purposely for this study. These 100 subjects Male and Female Basketball players of Kumaun University affiliated colleges of Uttrakhand were age ranged between 17 to 25 years. Since, age was very important factor in this study therefore maximum care should be taken to record correct age of the subjects. The date of birth were noted from the institutional records which was maintained with the help of documentary proof of one's date of birth when an individual enters the first educational Institution. Random checking of the ages of the subjects was also being carried out with the help from birth certificates. Doubtful cases were excluded from the study. The ages of the subjects was calculated from the date of birth and date of survey. The Sports Aggression Inventory, developed and standardized by Prof. Anand Kumar Shrivastava and Prem Shankar Shukla, was used to gauge the study subjects' level of sports Aggression.

Results & Findings

Table No.1:- Descriptive Table of Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression

GROUPS	N	MEAN	S.D	S.E
Male	50	11.52	2.90	0.410
Female	50	9.88	3.08	0.435

It is evident, from table-1 that Mean Score of Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression are

11.52 & 9.88; standard deviation scores are 2.90 & 3.08 and Standard error scores are 0.410 & 0.435 respectively.

The Mean Score of Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression are presented graphically in Figure-1.

Figure No. 1:- Mean Score of Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression

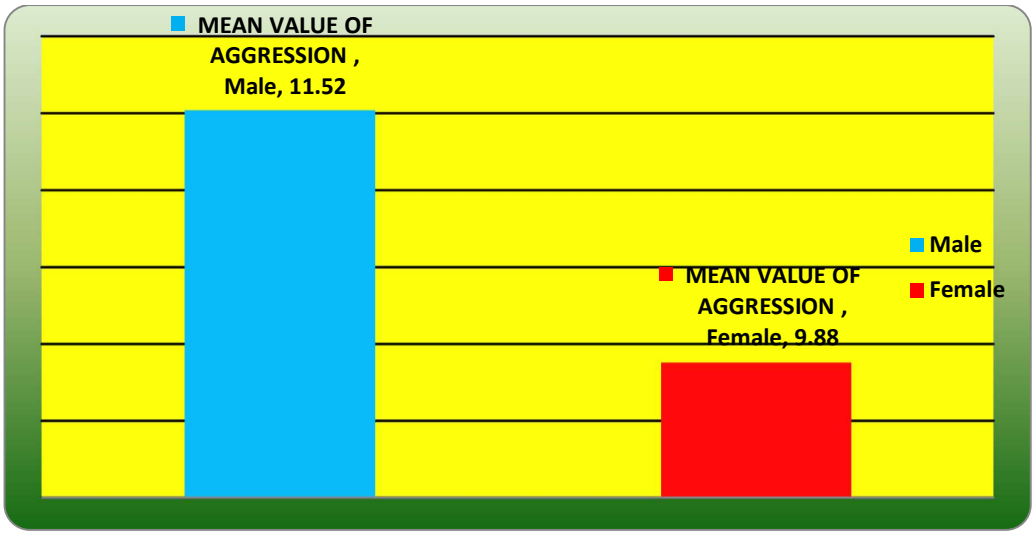

Table No.1.1:- Comparative Table of Difference between Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression

No. of groups	DEGREE OF FREEDOM	MEAN DIFFERENCE	t-value	p-value
2	98	1.6400	2.739*	0.00

***Significant at 0.05 level of significance**

It is evident, from table no. 1.1 that, there is a significant difference, between Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression, as the calculated t-value = 2.739,

which is more than the p-value at 0.05 level of confidence for 98 degrees of freedom.

It is quite obvious; from the above findings that Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression differ, significantly. Hence, it can be inferred, that there is a significant difference, between Male & Female basketball players residing in high altitude of Uttrakhand in relation to their Aggression.

Discussions of Finding

In discussing the significant differences between male and female basketball players residing in high altitudes of Uttarakhand concerning their aggression, several key points can be explored as: Studies have shown that high-altitude environments can lead to changes in physiological parameters such as oxygen saturation, heart rate, and hormone levels. These changes can influence mood and behavior, including aggression. Research by Burtscher et al. (2006) demonstrated that acute exposure to high altitudes can increase levels of stress hormones such as cortisol, which are linked to aggressive behavior. There is existing literature on gender differences in aggression, with some studies suggesting that males tend to exhibit higher levels of physical aggression compared to females (Archer, 2004). This difference in aggression levels could interact with the physiological effects of high altitude, leading to varying manifestations of aggression between male and female basketball players. High-altitude environments present unique stressors such as reduced oxygen availability, extreme weather conditions, and limited access to resources. These stressors can impact individuals' psychological states and may contribute to heightened aggression, as proposed by the General Aggression Model (Anderson & Bushman, 2002). Competitive sports like basketball often involve situations that can elicit aggressive behavior, such as intense physical contact, competition for points, and the pressure to perform. It's important to consider cultural and societal norms that may influence how aggression is expressed and perceived among male and female athletes in a specific region like Uttarakhand.

Other than numerous researches emphasizes the impact of cultural background on aggression, suggesting that cultural values and expectations can shape individuals' behavioral responses.

Conclusions

There is a Significant Difference Found between male and female basketball players residing in high altitudes of Uttarakhand concerning their aggression. By integrating findings from these areas of research, it becomes plausible to argue that there could indeed be a significant difference in aggression between male and female basketball players residing in high altitudes of Uttarakhand, given the interplay of physiological, psychological, and sociocultural factors.

References:-

Anderson, C. A., & Groves, C. (2013). General aggression model. In M. S. Eastin (Ed.) Encyclopedia of Media Violence (pp. 182-187). Los Angeles: Sage.

Archer, J., & Côté, S. (2005). Sex Differences in Aggressive Behavior: A Developmental and Evolutionary Perspective. In R. E. Tremblay, W. W. Hartup, & J. Archer (Eds.), Developmental origins of aggression (pp. 425–443). The Guilford Press.

Charles A. Bucher, "Foundation of Physical Education and Sports" (Saint Louis: The C.V. Mosby Company, 1983), p.3.

Loy W. John, D. Mc Pherson Barry and Kenyan Gerald, "Sports and Social Systems" (California: Addition Wesley Publishing Co., 1978), p.1.

Patrice Boucher & Pierrich Plusquellec.,(2019)., 'Acute Stress Assessment From Excess Cortisol Secretion: Fundamentals and Perspectives'. Frontiers in Endocrinology; 10: 749.Published online 2019 Nov 5. doi: 10.3389/fendo.2019.00749

Shane Murphy, "The Sport Psych Handbook" (Human Kinetics, 2005), pp. 14-15.

Sharma V.D. & Singh Granth., (1997).Physical And Health Education: Asha Prakasan Greh ,Karolbagh New Delhi.pg no.1-3.

Social Harmony in Sanskrit Sāhitya & its Relevance in Present

Prof. Anil Pratap Giri

Department of Sanskrit
University of Allahabad
Prayagraj-211002

Rāmayaṇa and Mahābhārata are the two great epics written in Sanskrit poetic style, the primary historical sources of knowledge to ancient Indian society. In Indian prospective, the Sanskrit Sāhitya can be treated as the mirror of society. It represents the Indian society. It reconstructs the Indian culture as well. Indian culture is followed by spirituality. Hence, The Sanskrit Sāhitya is a socio-spiritual-centric. Whatever has happened in the society depicted in the Rāmayaṇa and Mahābhārata, the great epics of India. These two epics represent Indian Intellectual, Philosophical and Spiritual culture. These two epics holistically represent all the dimensions of society. The epics preach that the human must four-fold goals for attaining sustainable happiness. The four-fold goals are named in Sanskrit Sāhitya as Dharma, Artha, Kāma and Mokṣa. Dharma, Artha, and Kāma are treated as an instrument of the Mokṣa. The mokṣa is the ultimate goal of the human beings. Human beings have to follow the Dharma firstly, then as per Dharma they have to earn Artha for intellectual happiness, As per Dharma and Artha they should fulfil materialistic desiour that is Kāma, Then as per Dharm, Artha and Kāma they have to attain the real bliss that is the ultimate stage of spiritual realization. Maharṣi Veda-vyāsa says that whatever is found in the Mahābhārata regarding four-fold goals it is found elsewhere as well and what is not found in this epic about Dharma, Artha, Kāma and Mokṣa, it doesn't exist anywhere. It means Mahābhārata deals the four-fold goals named Puruṣārtha-catuṣṭaya in the detailed manner-

"धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्। **Mahābhārata, 1.56.33**[1]

The Mahābhārata and Rāmayaṇa are treated as Ārṣa-kāvya-The kāvya which is related to the Ṛṣi. Ārṣa-kāvyas are the main loci of Sanskrit poetic writing traditions. They deal

Purusārtha Catuṣṭaya which represents duty based society as well as value based society so that each and every being of the society should feel prosperous, happy and spiritually elevated. The four-fold goals are the uncommon instrument to maintain the social harmony, therefore the literary meaning of Sāhitya in Sanskrit is **हितेन सह साहित्यम्, हितेन सह** = with welfare (P.R.Sarkar, 1957).[2] The concept of "Sāhitya" in Sanskrit literature is deeply intertwined with the idea of welfare or "lokakalyāṇa" **(लोककल्याण).** Sanskrit literature, in its various forms such as poetry, drama, prose, and various scriptures written in poetic style, has always been aimed at not just aesthetic pleasure but also the upliftment and well-being of society as a whole. The Sanskrit literature is rich in texts that impart knowledge, wisdom, and moral values. Works like the Vedās, Upaniṣadās, and Epics like the Rāmāyaṇa and Mahābhārata serve not only as literary masterpieces but also as sources of ethical guidance and spiritual wisdom, promoting individual welfare and societal harmony. Many Sanskrit texts, especially the Purāṇās and Dharmasāstrās, offer insights into societal structures, norms, and practices. They often critique social injustices and advocate for reforms that promote the welfare of all members of the society. The Sanskrit literary forms such as the Nāṭaka (drama) and kāvya (poetry) have been used to convey moral lessons, critique societal flaws, and inspire positive change. Kalidasa's works like "Abhijñānasākuntalam" and "Meghadūtam" not only showcase literary brilliance but also convey profound messages about love, duty, and the human condition, fostering welfare through their enduring impact on readers. The Sanskrit literature serves as a repository of cultural heritage and tradition. Works like the Purāṇas and Itihāsās preserve myths, legends, and historical narratives that impart valuable lessons and insights into the cultural ethos of ancient India, contributing to the well-being of future generations by fostering a sense of identity and continuity.

Viṣvnātha says that the purpose of Sāhitya is to attain four-fold goals of human life only. The Sāhityadarpaṇa, a foundational text in Sanskrit literary criticism, encapsulates the idea that even those with limited intelligence can attain happiness through the acquisition of the four aims of human life (Caturvarga) by engaging with poetry (Kāvya).

चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते॥ –साहित्यदर्पण 1.2[3]

In essence, the verse suggests that even those with limited intellectual capacity can attain happiness through the pursuit of the four aims of life, and it is poetry that elucidates or reveals this truth. This assertion underscores the transformative power of poetry, which has the ability to convey profound truths and insights in a manner accessible to all, regardless of their intellectual abilities. Thus, poetry is portrayed as a vehicle for understanding and experiencing

the deeper dimensions of human existence, transcending the barriers of intellect and language to touch the hearts and minds of the people of society from all walks of life.

Bhāmaha says that Sāhitya's purpose is to attain four goals of human life and so on.

धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्त्तिं प्रीतिं च साधुकाव्य–निबन्धनम्॥"[4] **–काव्यालङ्कार, 1.2**

This verse from the Kāvyālaṁkāra, attributed to Bhāmaha, highlights the multifaceted role of Sanskrit literature (Sāhitya) in serving the four-fold goals of human life (Dharma, Artha, Kāma, Mokṣa) as well as in enhancing aesthetic sensibilities (Kalā). Let's explore how this concept can contribute to maintaining social harmony in society through Sanskrit Sāhitya:

Dharma (Righteousness or Psycho-Spiritual Longing): The Sanskrit literature often contains narratives, teachings, and moral principles that uphold dharma, or Righteousness. Through stories, epics, and philosophical texts, Sanskrit literature reinforces ethical values, social responsibilities, and codes of conduct that contribute to the moral fabric of society. By promoting virtues such as honesty, integrity, compassion, and respect for others, Sanskrit literature fosters a sense of collective well-being and social harmony.

Artha (Wealth and Prosperity or Psychic Longing): The Sanskrit literature also addresses the practical aspects of life related to artha, or wealth and prosperity. It offers insights into economic principles, governance, trade, and other facets of social organization for the welfare and stability of society. Through works such as treatises on science, and statecraft, Sanskrit literature provides guidance on creating sustainable and equitable systems that promote economic growth and social stability, thereby contributing to overall harmony in society.

Kāma (Desire and Enjoyment or Physical Longing): The Sanskrit literature celebrates the human experience in all its dimensions, including the pursuit of kāma, or desire and enjoyment. Through poetry, drama, and lyrical compositions, Sanskrit literature explores the range of human emotions, relationships, and experiences, fostering empathy, understanding, and emotional connection among individuals. By acknowledging and affirming the diverse aspirations and desires of individuals, Sanskrit literature promotes inclusivity, tolerance, and acceptance within society, thus nurturing social harmony.

Mokṣa (Spiritual Liberation or Spiritual Longing): The Sanskrit literature has a rich tradition of spiritual and philosophical texts that offer guidance on the pursuit of Mokṣa, or spiritual liberation. Through scriptures, philosophical treatises, and poetry, Sanskrit literature provides insights into the nature of existence, the path to self-realization and the ultimate goal of human life. By encouraging introspection, self-discovery, and the cultivation of inner virtues, Sanskrit literature fosters spiritual growth and enlightenment, leading to greater harmony and unity within society.

Enhancement of Aesthetic Sensibilities (Kalā): In addition to serving the four-fold goals of human life, Sanskrit literature also enriches aesthetic sensibilities and cultural appreciation. Through its poetry, music, dance, drama, and visual arts, Sanskrit literature embodies beauty, creativity, and artistic excellence, inspiring individuals to appreciate the finer aspects of life and to cultivate a deeper connection with the world around them. By nurturing creativity, imagination, and artistic expression, Sanskrit literature contributes to the cultural vitality and vibrancy of society, fostering a sense of shared identity and belonging among its members.

In summary, Sanskrit literature, as articulated by Bhāmaha, serves as a powerful instrument for promoting social harmony by addressing the four-fold goals of human life and enhancing aesthetic sensibilities. Through its rich tapestry of narratives, teachings, and expressions, Sanskrit literature cultivates moral values, economic prosperity, emotional well-being, spiritual enlightenment, and cultural appreciation, thereby fostering a harmonious and inclusive society where individuals can thrive and flourish together.

चतुर्वर्गफलस्वादमप्यतिक्रम्यतद्विदाम्।
काव्यामृतरसेनान्तश्चमत्कारो वितन्यते– (वक्रोक्तिजीवितम्, 1/5)

The verse from Vak roktijīvitam highlights the transformative power of poetry and the profound joy, it offers to those who engage with it. By celebrating the nectar-like essence of poetry, the verse invites us to explore the depths of aesthetic experience as a pathway to inner fulfilment, spiritual enlightenment, and enduring happiness.

Elucidates the idea that the enjoyment of the fruits of the four-fold goals of human life (Dharma, Artha, Kāma, Mokṣa) can be surpassed by the delight derived from the nectar-like essence of poetry (Kāvyāmṛtarasa). The verse suggests that the delight derived from experiencing Kāvyāmṛtarasa surpasses the enjoyment derived from the pursuit of the four-fold goals of human life. While material pursuits and achievements may bring temporarily satisfaction, the aesthetic and spiritual fulfilment offered by poetry transcends the limitations of worldly desires and attachments. Poetry has the capacity to elevate consciousness, expand horizons, and awaken deeper dimensions of human experience beyond the realm of the mundane.

In essence, Sanskrit literature embodies the idea of "lokakalyāṇa," as it does not only entertains and enlightens but also serves as a guiding light for individual and societal welfare, reflecting the timeless wisdom and compassionate ethos of Indian civilization. In Which civilization, there is no sprit of welfare, discusses in that particular literary texts, we cannot use the term Sāhitya for that literary texts. Rājaśkhara defines kāvya as **"हितोपदेशकत्वात् काव्यम्"** it means that "poetry is that which is the main cause of welfare. Rājaśkhara emphasizes the society serves a didactic purpose, offering guidance and instruction for the welfare and benefit

of individuals and society as a whole. Mathematical derivation the Sanskrit word Sāhitya is as follows:

Sāhitya derives form Sahita=सम्+धा+क्त . Sāhitya deals हितोपदेश.

Sāhitya= Sahita= with. Sāhitya= Sahita+ष्ञ्=with harmony.

Sāhitya is that those characteristics move with harmony.

Hence, The Sāhitya possesses the hormonic structure.

The Literary meaning of Sanskrit literature is welfare of society and blessed full life. Thus, Sanskrit literature is that which moves together with society and leads society towards true fulfilment and welfare by providing the inspiration to serve. Art for art's shake is not acceptable. Art for service and blessedness is acceptable.The Sāhitya imparts the balanced wisdom to both poet and reader for how to behave like Rāma not Rāvaṇa in the society. **रामादिवत्प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत्[5] । रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणादिवदित्युपदेशं च यथायोगं कवेः सहृदयस्य च करोतीति–काव्यम्[6].** Behaviour of Rama is to perform his duty honestly which assigned by the competent authority that is why he is known as **मर्यादा पुरुषोत्तम।** Sāhitya, or literature, serves as a guiding light, imparting balanced wisdom to both the poet and the reader. Its essence lies in instructing individuals on how to emulate the virtuous behaviours of Rāma rather than the nefarious conduct of Rāvaṇa within society. Just as Rāma epitomizes nobility, so too should individuals aspire to emulate his example, not that of Rāvaṇa.

The fundamental teaching of Sāhitya is to encourage individuals, both poets and readers alike, to adopt the principles embodied by Rāma's character. Rāma's conduct is characterized by dedication to duty, integrity, and adherence to moral principles. He exemplifies the ideal of "**मर्यादा पुरुषोत्तम**" (Maryādā Puruṣottama), the epitome of noble conduct, by faithfully fulfilling his responsibilities and obligations as assigned by competent authority.

In contrast, Rāvaṇa represents the antithesis of these virtues, embodying arrogance, greed, and moral depravity. His actions serve as cautionary tales, illustrating the consequences of succumbing to base desires and straying from the path of righteousness.

Thus, through the medium of literature, poets convey the timeless wisdom encapsulated in the dichotomy between Rāma and Rāvaṇa. They inspire their readers to conduct themselves in accordance with the virtuous example set by Rāma, thereby promoting harmony, justice, and ethical conduct within society. In essence, Sāhitya serves not only as a source of entertainment but also as a beacon of moral guidance, urging individuals to aspire towards the noble ideals embodied by Rāma. Sāhitya is that whose characteristic is to move with the trends of life.

- The Sanskrit Sāhitya imparts the real knowledge.
- The Sanskrit Sāhitya makes the life delightful.
- The Sanskrit Sāhitya is an instrument of gaining Puruśārtha-Catuṣṭaya.

- The Sanskrit Sāhitya is that which liberates.
- The Sanskrit Sāhitya is the mirror of society.
- The Sanskrit Sāhitya represents the society.
- The Sanskrit Sāhitya reconstructs the society.
- The Sanskrit Sāhitya is an aesthetic relationship between the word and meaning.

Aesthetic relationship delimits the property of the meaning in such a way so that the property of word and the property of meaning should be equivalent. Then, wherever is the word there is aesthetic meaning or wherever is the aesthetic meaning there is the word. Therefore, The Sāhitya is a hormonic relationship between the word and meaning. **सहितयोः भावः साहित्यम्–, 1.17,वृत्तिः व.जी.। शब्दार्थयोः अन्यूनानतिरिक्त–सौन्दर्यात्मकभावः साहित्यम् ।**[7] **सम्+धा धातु+क्त+ष्यञ्=साहित्य=**Sāhitya possesses harmonic essence of the word and its meaning.Literature is the source of history. It does not impart utopia; therefore it is the mirror of society. Literature is the source of knowledge therefore it represents the society. Literature is the work of poet who is having competence to enhance the society. Therefore, literature reconstructs the society. **वसुधैव कुटुम्बकम्**[8]**-The World is only family-G-20 Motto-2023-वसुधैव कुटुम्बकम्। The theme of India's G20 Presidency -"Vasudhaiva Kuṭumbakam" or "One Earth · One Family · One Future" - was drawn from the ancient Sanskrit text of the Mahopaniṣad. Essentially, the theme affirms the value of all life – human, animal, plant, and microorganisms – and their interconnectedness on the planet Earth and in the wider universe. The theme also focused on (Lifestyle for Environment), with its associated, environmentally sustainable and responsible choices, both at the level of individual lifestyles as well as national development, leading to globally transformative actions resulting in a cleaner, greener and bluer future.G-20 Motto-2023 deals: a sustainable, holistic, responsible, and inclusive manner based economic growth. living in harmony with the surrounding ecosystem**[9]**.**

- **Whole world is only family.अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।**
  उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।।–हितोपदेशः 2–मित्रलाभः,कथा०3.70
- **He is mine, he is another, not mine- such are thoughts of narrow-minded people. For the noble minded the whole world is only family.**
- **अयं बन्धुरयं नेति गणना लघुचेतसाम्।**
  उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्। – महोपनिषद्,06.71
- **This is our friend, and this is not our friend, such calculations are done by mean minded people. The entire earth is only family for people with a generous heart.**
- **वसुधैव कुटुम्बकम् deals oneness and one family.**

  Oneness has three barriers: Must be removed

1. Geo-sentiment[10] (Geo-religion, Geo-economics, Geo-patriotism) 2. Socio- sentiment[11] 3. Human-sentiment)[12] . Geo-sentiment can be removed through ज्ञानमार्ग (अधीति–बोध–आचरण–प्रचार से) निरसन, with the motto- "spirituality as an essence". The Socio-sentiment can be removed through कर्ममार्ग (Excellence in action), with the motto "spirituality as a mission." .The Human sentiment can be removed through भक्तिमार्ग से (प्रेम, श्रद्धा) with the mission "spirituality as a cult"

वसुधैव कुटुम्बकम् makes balanced between materialistic development and spiritual development. This concept embodies the idea of universalism, emphasizing the interdependence of all beings, irrespective of differences in nationality, ethnicity, religion, or other identities. It underscores the notion that all individuals and communities are part of a larger global family and should therefore coexist harmoniously, with mutual respect, understanding, and cooperation.

In the context of balancing materialistic development and spiritual development, "Vasudhaiva Kuṭumbakam" serves as a guiding principle for integrating these two dimensions of human existence. Materialistic development pertains to the pursuit of economic prosperity, technological advancement, and material well-being, while spiritual development encompasses the cultivation of inner values, moral principles, and a sense of purpose beyond material concerns.

The concept of "Vasudhaiva Kuṭumbakam" advocates for a holistic approach to development that recognizes both material and spiritual dimensions of human life. It emphasizes not only addressing material needs and aspirations but also nurturing the inner growth and well-being of individuals and societies. This balanced approach seeks to promote human flourishing in all its dimensions– physical, mental, emotional, and spiritual – while fostering a sense of interconnectedness, compassion, and unity among all members of the global community.

Academically, this concept can be analysed through various disciplinary lenses, including philosophy, sociology, economics, psychology, and religious studies. Scholars may explore its historical origins, cultural significance, and philosophical underpinnings, as well as its relevance to contemporary issues such as globalization, development with social justice.

Furthermore, research may examine how different societies and cultures interpret and apply the principle of "Vasudhaiva Kuṭumbakam" in their social, political, and economic systems, and the implications of these interpretations for human well-being, social cohesion, and environmental sustainability. Through rigorous analysis and interdisciplinary inquiry,

scholars can contribute to a deeper understanding of how to achieve a harmonious balance between materialistic and spiritual development in today's complex and interconnected world.

Sāhitya deals the reality of the society. He creates the poetic world out of the given world. Poetic world is the manifestation of the given world therefore this poetic world is as much real as given world. Agnipurāṇa elaborates this concept in the following kārika:

Āpāre kāvya-saṁsāre kavirekaḥ prajāpatiḥ,

Yathāsmai rocate viśvaṁ tathedaṁ parivartate.[13] Agnipurāṇa,340.10.

A literary artist alone is the creator of the world of literary art. He or She transforms the given world into a world of art as per his or her liking. **'Thus, an artist creates the literary world out of the experience of the given world. His creation is nothing more than a beautiful arrangement and rearrangement of the given world.**

Rājaśekhara says in his Kāvyamīmāṁsā that All Śāstras are an Epistemological Instruments of Kāvya. Kāvya is superior to all the Śāstras. Śāstras render the knowledge but Kāvya renders knowledge with joy.

Highest status of literature and literary theories in the Sanskrit Discipline.

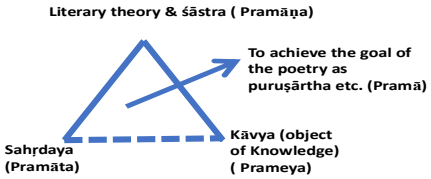

- Thus the whole argument enhances the status of kāvya as the the object of knowledge, for which all śāstras are seen as epistemological instruments.

The assertion that all Śāstras serve as epistemological instruments of Kāvya and that Kāvya holds superiority over all the Śāstras reflects a profound perspective on the nature of knowledge acquisition and its relationship to aesthetic expression. In this view, Kāvya, or poetry and literature in its broader sense, is regarded as the pinnacle of human intellectual and creative achievement, surpassing even the sacred texts and scriptures traditionally revered for their wisdom and authority.

Śāstras, encompassing various branches of knowledge such as philosophy, law, science, and spirituality, are indeed revered for their role in imparting knowledge and guiding human conduct. They serve as repositories of accumulated wisdom, offering frameworks for understanding the nature of reality, the purpose of existence, and the principles of ethical living.

Through systematic analysis, logical reasoning, and empirical observation, Śāstras provide invaluable insights into the workings of the world and the human condition.

However, according to the perspective being articulated, Kāvya transcends the mere transmission of knowledge and wisdom found in the Śāstras by infusing it with a unique quality – joy. Kāvya, through its aesthetic beauty, emotional resonance, and imaginative storytelling, has the power to evoke profound experiences of delight, inspiration, and transcendence in its audience. In this sense, Kāvya imparts knowledge and enriches the human experience by awakening the senses, stimulating the imagination, and touching the heart.

The superiority of Kāvya lies in its ability to convey truths and insights in a manner that transcends the limitations of intellectual comprehension alone. While Śāstras may render knowledge through logical argumentation and scholarly discourse, Kāvya communicates knowledge through the language of metaphor, symbolism, and imagery, appealing to the intuitive and emotional faculties of human consciousness. In this way, Kāvya has the potential to penetrate deeper layers of understanding and evoke transformative experiences that go beyond the realm of rational discourse. Moreover, Kāvya has a universal appeal that transcends cultural and linguistic boundaries, speaking to the shared human experiences of love, longing, joy, sorrow, and the search for meaning. It serves as a mirror to society, reflecting its values, aspirations, and dilemmas while offering imaginative visions of alternative realities and possibilities.

Sanskrit Kavi is Sādhaka and real Yogi: The assertion that a Kavi (poet) is a Sādhaka (spiritual practitioner) and a real Yogi (one who practices yoga) reflects a profound understanding of the inner journey of the creative process and the parallels it shares with spiritual disciplines such as yoga and meditation.

At its core, poetic creation is not merely a mechanical exercise of arranging words and phrases but a profoundly contemplative and transformative practice. Just as a Sādhaka engages in rigorous spiritual disciplines to attain higher states of consciousness and realization, a realization into the depths of their being to access the wellspring of inspiration and creativity. Like a Yogi on the path of self-realization on an inward journey of introspection, meditation, and self-discovery, through deep concentration and mindfulness, the poet cultivates a heightened awareness of their inner landscape, exploring the recesses of their psyche and tapping into the universal currents of inspiration that flow through the collective consciousness.

Moreover, poetic creation often involves a state of heightened receptivity and openness, akin to the state of Samādhi (absorption) experienced by Yogis in deep meditation. In this state of heightened awareness, the poet transcends the boundaries of the ego and merges with the creative source, channelling divine inspiration into their words and expressions.

Furthermore, just as a Yogi seeks to transcend the limitations of the individual self and experience union with the divine, a Kavi endeavours to transcend the boundaries of language and form to express universal truths and insights that resonate with the human soul. Through their poetry, the Kavi seeks to dissolve the barriers of separation and foster a sense of connection and unity with the cosmos.

In essence, the assertion that a Kavi is a Sādhaka and a real Yogi underscores the recognition of poetry as a sacred and transformative endeavour, capable of illuminating the path to self-realization .Through their creative work, poets give voice to the ineffable mysteries of existence and inspire others to embark on their own journey of self-discovery and inner exploration. Thus, poetry becomes a potent tool for awakening consciousness and fostering a deeper understanding of the interconnectedness of all beings in the vast tapestry of creation—invocation and भरतवाक्यम्[14] justify that entire poetry if spiritual-centric.

Through the literature, Kavi makes Physical, Psychic and Spiritual Transformation of human beings.

In Sanskrit literature, particularly Sanskrit poetry, this form of artistic expression is held in the highest esteem across the entire spectrum of Sanskrit discourse. The ultimate purpose of Sanskrit poetry is to bestow enjoyment upon its audience, but it also has an immediate objective: to impart real knowledge. Enjoyment in this literary tradition is predicated on the acquisition of real knowledge. Through understanding and internalizing in the poetry, the audience, or concourse, can genuinely experience enjoyment. This foundational principle underlies all Sanskrit poetry globally, where knowledge precedes enjoyment.

Sanskrit poetry is unique in imparting knowledge about the real world rather than imaginary or fantastical realms. The poets of this tradition are often regarded as true yogis, deeply versed in the Śāstras, the sacred texts. They masterfully depict the realities of life through their poetic compositions, steering clear of romantic fantasies. This adherence to realism allows the audience to relate intimately to the content, fostering a deeper engagement with the text. Sanskrit poetry thus stands apart in its commitment to portraying the real world.

The audience of Sanskrit poetry can be called Pramātā, the knower. This individual seeks to understand the natural world through poetry, aiming to attain a deconditioned state that ultimately leads to enjoyment. Sanskrit poetry is seen as the most accessible and effective means for the Pramātā to gain this understanding. Within the technical terms of Sanskrit poetics, the knower is also known as Sahṛdaya. A Sahṛdaya is not an ordinary person but someone with a refined sensibility, capable of resonating deeply with the subject matter of the poetry.

Ācārya Abhinavagupta, a revered scholar in Sanskrit poetics, offers a definition of Sahṛdaya: "**येषां काव्यानुशीलनाभ्यासवशाद् विशदीभूते मनोमुकुरे वर्णनीयतन्मयीभवनयोग्यता ते हृदयसंवादभाजः सहृदयाः.**" This definition has been translated by Daniel H. H. Ingalls in his seminal work "The Dhvanyaloka of Anandavardhana with the Locana of Abhinavagupta" as follows: "The word Sahṛdaya (lit., 'having their hearts with it') denotes persons who are capable of identifying with the subject matter, as the mirror of their hearts has been polished by the constant study and practice of poetry, and who respond to it sympathetically in their hearts. As said, 'The realization of the object (e.g., vibhāva, etc.) which finds sympathy in the heart is the origin of rasa.

The process by which Sanskrit poets transform the objective world into a subjective experience is central to the role of the Sahṛdaya. This transformation allows for a psychic shift within the Sahṛdaya, enabling them to internalize and interiorize the essence of the poetry. Such a transformation is crucial as it opens the possibility of attaining bliss. This profound and enduring enjoyment transcends mere sensory pleasure and reaches into intellectual and spiritual fulfilment.

Sanskrit poetry, therefore, is not just a medium of artistic expression but a conduit for deep philosophical and spiritual exploration. It bridges the gap between the external world and the internal experiences of the reader, fostering a space where knowledge and enjoyment coexist harmoniously[15].

In Indian philosophical systems, the concept of the knower, or Pramātā, is integral to understanding the nature of knowledge and reality. In Sanskrit poetics, this knower is referred to as Sahṛdaya. The Sahṛdaya seeks to understand the Kāvya, technically termed as Prameya. The central question arises: how does the Sahṛdaya come to know the Kāvya? What is the process applied in grasping the essence of Kāvya?

Kāvya represents the poetic world, a subjective reality manifested from the objective world. The objective world is the natural which is also the given world that exists but depends upon human intellect. It is a pre-existing reality that humans perceive and interact with. However, the human mind mediates the comprehension of this objective world. As humans perceive and understand this objective reality, they articulate it in the form of knowledge. This knowledge is then responsible for human behaviours. It is instrumental in achieving both worldly and spiritual development, encapsulated in the concept of Puruṣārtha Catuṣtaya—the four-fold aims of human life.

The poetic world, or Kāvya, is thus a creation of poets who derive their inspiration from the objective world. This poetic world is not imaginary within the context of Sanskrit literature; it is as accurate as the objective world itself. In this tradition, poets are seen as modifiers who

transform the real world into the poetic world. Consequently, the purpose of understanding the real world is mirrored in understanding the poetic world. The lyrical world, known as Prameya, is accessible to the knower through knowledge known as Pramāṇa.

Pramāṇa is an instrument or means of knowing by which knowledge is acquired. In the context of understanding Kāvya, the entire corpus of Śāstra, or scriptural texts, and their practical application in the behaviours observed in the real world serve as the Pramāṇa. The Sanskrit Śāstras encompass a vast body of knowledge, including philosophy, science, art, and ethics, which provide the foundational framework for interpreting and understanding the world. To grasp Sanskrit poetry, one must thoroughly know these Śāstras. The Śāstra is the primary tool for learning the poetic world.

Additionally, the behaviours and practices of common people in the real world, which the Śāstra also delineate, act as a secondary instrument for understanding the poetic world. The interactions, customs, and moral codes observed in daily life reflect the principles in the Śāstras, providing a practical context for theoretical knowledge. Thus, understanding human behaviours, as guided by the Śāstras, becomes crucial for interpreting and appreciating Sanskrit poetry.

The knowledge of the Śāstra thus aids in a deeper understanding of Kāvya. The Śāstra is treated as Pramāṇa for the knowledge of the poetic world because it equips the Sahṛdaya with the necessary insights and frameworks to decode the layers of meaning within the poetry. Without this foundational knowledge, the subtleties and nuances of Sanskrit poetry would remain inaccessible.

In essence, the journey of the Sahṛdaya to understand Kāvya is deeply rooted in the study and application of the Śāstras. The Śāstras provide the theoretical underpinnings and contextualize the practices observed in the real world, thereby bridging the gap between the objective and the subjective, the real and the poetic. This intricate interplay of knowledge and reality, mediated by the Śāstras, enables the Sahṛdaya to attain a comprehensive understanding of the lyrical world, fulfilling the dual purposes of learning and enjoyment that Sanskrit poetry inherently seeks to provide.

Through this elaborate process, the knower transforms into a connoisseur, capable of appreciating the profound depths of Sanskrit poetry. This transformative journey underscores the symbiotic relationship between the objective world and the poetic world, mediated by the intellectual and spiritual rigour of the Śāstras. Thus, Sanskrit poetry, through its unique blend of realism and poetic imagination, continues to be a timeless conduit for knowledge, beauty, and joy, offering a rich tapestry of insights for the discerning Sahṛdaya.

Through the profound knowledge of the Śāstras, a Sahṛdaya—an individual with a refined and empathetic sensibility—grasps the essence of the poetic world, enabling the

attainment of the four-fold goal of human life, known as Puruṣārtha Catuṣṭaya. This concept encompasses Dharma (righteousness), Artha (wealth), Kāma (pleasure), and Mokṣa (liberation)—the realization fosters social harmony, which can be categorized into internal and external harmony.

Internal harmony refers to the alignment between an individual's psychic and physical dimensions, leading to a state of psycho-physical and psycho-spiritual parallelism. This inner balance facilitates a complete transformation within the individual. When people achieve internal harmony, their perceptions and behaviours shift fundamentally. This internal transformation naturally extends outward, influencing their interactions and relationships, thus contributing to harmonising the world—the society.

An individual who has attained internal harmony perceives the world through a lens of balanced and enlightened understanding. This shift in perception influences their behaviours, promoting actions that contribute to social cohesion and collective well-being. Such an individual becomes a catalyst for positive change, fostering an environment of prosperity, peace, and genuine bliss within the community. The ripple effect of one internally harmonized individual is profound, as their actions inspire others and contribute to the overall harmony of society.

Sanskrit poetry plays a pivotal role in this process by serving as a medium through which the knowledge and values of the Śāstras are conveyed. The poetic world, crafted by the poets from the objective reality, resonates deeply with the Sahṛdaya. Through this resonance, the Sahṛdaya internalizes the wisdom embedded in the poetry. The aesthetic experience of Sanskrit poetry, enriched by its moral and philosophical underpinnings, facilitates the internal harmony of the reader.

The harmonious interplay between the internal and external realms underscores the transformative power of Sanskrit poetry. Engaging deeply with the poetic world, the Sahṛdaya undergoes a metamorphosis that transcends personal enlightenment and extends to societal well-being. This transformative process is a testament to the integral role that Sanskrit poetry plays in maintaining and nurturing social harmony.

Internally harmonized individuals are guided by the principles gleaned from Sanskrit poetry, and they should act with integrity, empathy, and wisdom.

References:-

1. Veda Vyāsa, Mahābharata,1.56.33
2. Sarkar, P.R. *The Practice of Art and Literature. Discourse on Neohumanist Education*. Discourses on Neohumanist Education, 1957
3. विश्वनाथ, साहित्यदर्पण,1.2
4. भामह, काव्यालङ्कार, 1.2

5. चतुर्वर्गफलप्राप्तिहि कोव्यतो 'रामादिवत्प्रवतितव्यं न रावणादिवत्' इत्यादिः कृत्याकृत्यप्रवृत्तिनिवृत्त्युपदेशद्वारेण सुप्रतीतैव । उक्तं च (भामहेन)—

   'धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।

   करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्यनिषेवणम्' ॥ इति ।- विश्वनाथ, साहित्यदर्पण,1.2

6. कालिदासानादीनामिव यशः श्रीहर्षदिर्धावकादीनामिव धनं राजादिगतोचिताचारपरिज्ञानम् आदित्यादेर्मयूरादीनामिवानर्थनिवारणम् सकलप्रयोजनमौलिभूतं समनन्तरमेव रसास्वादनसमुद्भूतं विगलिदवेद्यान्तरमानन्दम् प्रभुसम्मितशब्दप्रधानवेदादिशास्त्रेभ्यः सुहृत्सम्मितार्थतात्पर्यवत्पुराणादीतिहासेभ्यश्च शब्दार्थयोर्गुणभावेन रसाङ्गभूतव्यापारप्रवणतया विलक्षणं यत् काव्यं लोकोत्तरवर्णनानिपुणकविकर्म तत् कान्तेव सरसतापादनेनाभिमुखीकृत्य रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणादिवदित्युपदेशं च यथायोगं कवेः सहृदयस्य च करोतीति सर्वथा तत्र यतनीयम्।-मम्मट,काव्यप्रकाश,1.2

7. कुन्तक, वक्रोक्तिजीवितम्,वृत्ति-1.17

8. **महोपनिषद्, अध्याय 6, मन्त्र 71**

9. https://www.g20.in/en/g20-india-2023/logo-theme.html

10. The sentiment that grows out of love for the indigenous soil of a country is called Geo-sentiment. From this geo-sentiment, many other sentiments emerge, such as geo-patriotism, geo-economics, and many other geocentric sentiments, including geo-religion. This geo-sentiment attends to keep humanity confined within a limited part of this world. But this inner most desire of people is to expand themselves maximally in all directions….. Because it pollutes the devotional sentiment, it degrades human beings, and undermines human excellence-Sarkar, Shri Prabhat Ranjan. *Liberation of Intellect:Neo-Humanism*. Acharya Mantreshvaranda Avadhuta,527,V.I.P. Nagar,Kolkata-100, 2016,Discourse 1,Devotional Sentiment and Neohumanism,p.4

11. Socio sentiment does not confine people to a particular territory, but instead pervades a particular social group. That is, instead of thinking about the welfare of a particular geographical area, people think about the well-being of a group, even to the exclusion of all other groups……This Socio sentiment is a bit better than geo-sentiment, but it is not altogether ideal, it is not free from defects. Socio-sentiment has, in the past, caused much blooded and created enormous division and mutual, distressed among human groups, separating one group from another, and throwing them into the dark dangerous of petty dogmas- Sarkar, Shri Prabhat Ranjan. *Liberation of Intellect:Neo-Humanism*. Acharya Mantreshvaranda Avadhuta,527,V.I.P. Nagar,Kolkata-100, 2016,Discourse 1,Devotional Sentiment and Neohumanism,p.4

12. Agnipurāṇa,340.10.

13. Ending invocation of the Sanskrit Plays.
    INGALLS, H. H., DANIEL (Translator), The Dhvanyaloka of Anandavardhana with the Locana of Abhinavagupta1.1, (Harvard Oriental Series), HARVARD UNIVERSITY PRESS,1990, Vol. 49,p.70

पुस्तक समीक्षा

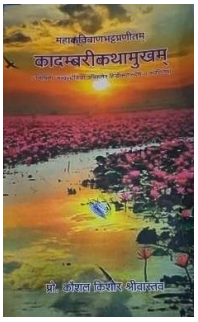

पुस्तक का नाम– महाकविबाणभट्टप्रणीतम् कादम्बरीकथामुखम् (उन्मेषिणी संस्कृत टीका के साथ हिन्दी रूपान्तरण से संवलित)

टीकाकार–प्रो. कौशल किशोर श्रीवास्तव (अधिष्ठाताचर इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज तथा विभागाध्यक्षचर पालि, प्राकृत एवं संस्कृत भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज)

प्रकाशन – शाश्वत प्रकाशन एवं शोध संस्थान, प्रयागराज

संस्करण– प्रथम 2022

पुस्तक में कुल पृष्ठों की संख्या– 270 पृष्ठ

"बाणो वाणी बभूव ह" राजशेखर की इस उक्ति को यथार्थ करने वाले गद्य सम्राट महाकवि बाणभट्ट–प्रणीत कादम्बरी नाम्नि रचना पर गुरुवर्य प्रोफेसर कौशल किशोर श्रीवास्तव कृत 'उन्मेषिणी' संस्कृत टीका जो भाषानुवाद के साथ प्रकाशित है, अपने अन्दर टीका के लक्षण को पूर्णरूप से समाहित करती है। "गद्यकवीनां निकषं वदन्ति" यह उक्ति संस्कृत– जगत में प्रसिद्ध है। पद्य में जहाँ भावों की सरिता का सरस कल्लोल होता है वहीं गद्य विधा निश्चित रूप से स्वयं में हार्दिक पक्ष के साथ बुद्धि के वैभव और श्रम को समाहित किये रहती है। महाकवि बाणभट्ट अपनी कादम्बरी रचना से ख्यातिलब्ध हैं, जो गद्यकाव्य अथवा कथा होने पर भी सर्वत्र बाणभट्ट के नाम के पूर्व 'गद्यसम्राट' के साथ–साथ 'महाकवि' पद की योजना करती है। यह महाकवि बाणभट्ट के वर्णन–कौशल के साथ–साथ उनके वर्णन चातुर्य का ही परिणाम है कि सहृदय पाठक को कादम्बरी में सहज ही रसानुभूति होती है तथा कादम्बरी के अध्ययन में निमग्न पाठक अपने समस्त जागतिक कार्यों को विस्मृत कर देता है। अतः विद्वन्मण्डली में यह उक्ति बहुप्रथित है कि 'कादम्बरी रसज्ञानां आहारोऽपि न रोचते'। अतः इस महनीय ग्रन्थ पर टीका करना विद्वानों के लिए एक दुरुह कार्य होने पर भी विद्वद्वर प्रोफेसर कौशल किशोर श्रीवास्तव जी के लिए मनोविनोद का साधन है। जो स्वभावतः नैक ग्रन्थों के स्वाधाय और चिन्तन में रत रहते हैं। प्रोफेसर श्रीवास्तव जी ने अपने अध्यापन काल में छात्रों को विविध शास्त्रों और ग्रन्थों का अध्यापन कराते हुए सेवानिवृत्त होकर अवकाश की अवधि में पर्याप्त अनुभव सम्पन्न होकर छात्रों के मार्ग को विन्ध्याटवी जैसे गहन विपिन में सुगम बनाने हेतु इस टीका का प्रणयन किया है जो उनके विद्याव्यसन के साथ–साथ उनकी सहृदयता और विद्यार्थियों के हित में उनकी तत्परता का परिचायक है। गुरुवर्य प्रो. श्रीवास्तव कृत सानुवाद उन्मेषिनी टीका की कुछ विशेषताएँ निम्न हैं–

ग्रन्थारम्भ में जहाँ महाकवि बाणभट्ट "अजाय... त्रिगुणात्मने नमः" कहकर सत्व, रज तथा तमोगुण से युक्त परमेश्वर को नमन करते हैं वहीं टीकाकार–

"मोहकल्मषहन्त्रीं च अमृतरसवर्षिणीम्।
बुद्धिदात्रीं जगध्दात्रीं शर्वाणीं नौमि सादरम्।।"

लिखकर त्रिगुणात्मक प्रपञ्च की आधारभूता पराम्बा को नमन करते हुए त्रिगुणात्मक जगत की सञ्चालिका जगन्माता के प्रति अपनी अगाध श्रध्दा और कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। तत्पश्चात् परम्परानुसार कविस्तुति के साथ ग्रन्थ के वैशिष्ट्य वर्णन के अनन्तर "चित्तं हरति सर्वेषां एषा बाणकवेः कृतिः" यह पंक्ति लिखते हैं जो इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि निश्चित रूप से महाकवि की यह कृति टीकाकार के मन को भी आकृष्ट कर चुकी है जिससे प्रेरित होकर वे इस श्रमसाध्य किन्तु स्वान्तःसुखप्रदाता कार्य में प्रवृत्त हुए हैं।

इसके अनन्तर दो श्लोकों में टीकाकार ने अपनी टीका का उद्देश्य प्रकट किया है जिनमें स्पष्ट होता है कि इस सरस ग्रन्थ के अर्थप्रकाशनार्थ, समस्त छात्रों के कल्याणार्थ तथा उनके हित की कामना से राष्ट्रभाषा का आलम्बन लेते हुए सानुवाद यह टीका प्रस्तुत है–
सरसायाः कृतेरस्याः अर्थप्रकाशनाय वै।

'उन्मेषिणी' नु टीकैषा तन्यते सादरं मया ।।
कल्याणार्थं समेषां तु छात्राणां हितकांक्षया ।
राष्ट्रभाषां हि आलम्ब्य अनुवादो विधीयते ।।

"बाणोच्छिष्टं जगत सर्वं" सूक्ति विद्वानों के मध्य सामान्येन स्वीकृत और प्रसिद्ध है जिसका शाब्दिक अर्थ है कि सम्पूर्ण संसार बाण द्वारा जूठा किया गया है अर्थात् बाणभट्ट ने कुछ भी नहीं छोड़ा है अपितु समस्त संसार के सकल ज्ञान–विज्ञान और विषयों को अपनी रचना में बाण ने समाहित कर लिया है। यह स्थिति महाभारत के सम्बन्ध में प्रसिद्ध उक्ति– **'यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्'** के समान ही बाण की रचना की परिपक्वता और व्यापकता को व्याख्यायित करती है। ऐसे मनीषी कवि के भावों को यथार्थ रूप में समझकर उस पर टीका वही विद्वान, मनीषी कर सकता है शास्त्रों में जिसकी अपनी अबाध गति बाणभट्ट के समान हो। जो वेद, वेदाङ्ग, साहित्य, धर्मशास्त्र, कोश, दर्शन, के साथ–साथ वेदांगों में मुख रूप में स्वीकृत व्याकरण और वेद पुरुष के चक्षु रूप में मान्य ज्योतिषशास्त्र में निष्णात विद्वान हों।

कादम्बरी के लेखन में महाकवि बाणभट्ट की लेखनी तब तक विश्राम नहीं लेती जब तक वे कथ्य को पूरा व्यक्त नहीं कर लेते हैं। यही कारण है कि **'ओजः समास भूयस्तमेतदगद्यस्य जीवितम्'** महाकवि दण्डी की यह पंक्ति बाणभट्टकृत कादम्बरी में पूरी तरह चरितार्थ होती है। बाण का वर्णन–वैविध्य उनकी अपनी निजी विशेषता है जिसके साथ वर्ण्यविषय सम्बन्धित उनका अगाध पाण्डित्य मणिकाञ्चन संयोग है, जो पाठक को कथानक की गहनता में प्रवेश कराता है। महाकवि

बाणभट्ट का वर्ण्य–विषय अपरिमित होने से साथ–साथ शास्त्रों के वैविध्यज्ञान से असीमित भी है; यथा–रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत महापुराण, स्कन्दपुराण, दर्शनशास्त्र, व्याकरण, ज्योतिष के उपाख्यानों तथा सम्बन्धित स्थानों पर इनके विषय विशेष के उल्लेख–द्वारा महाकवि बाणभट्ट ने जो कथा अथवा काव्य संसार सृजित किया है, टीकाकार ने अपने गहन अध्ययन और अपनी विलक्षण प्रज्ञा की परिणति 'उन्मेषिणी' टीका द्वारा उस काव्य–संसार को पाठकों हेतु प्रकाशित किया है। टीकाकार का विषय सम्बन्धी ज्ञान और अभिव्यक्ति–कौशल का उदाहरण द्रष्टव्य है–मङ्गलाचरण पर टीका करते हुए टीकाकार विभिन्न ग्रन्थों के उध्दरण, व्याकरणात्मक टिप्पणी, कोशादि का उध्दरण देते हुए बिना किसी खींचातानी के पाठकों के लिए कथा का भाव सहजबोध्य और रोचक बनाते हैं; उदाहरणार्थ– 'प्रलये' की पद की टीका में– **जगन्निरोधकाले तमः स्पृशतीति तमः स्पृक् तस्मै। स्पृशोऽनुदके क्विन्, इति तमस् स्पृश+क्विन्। तमोगुणान्विताय शङ्कराय संहारकर्त्रे शङ्कराय इति।** प्रलये गुर्वावरणकेन तमसा सर्वम् आव्रियते जगत्। जन्मनि स्थितौ प्रलये च अत्र 'निमित्तात्कर्म योगे' इति नैमित्तिकी सप्तमी वा। टीकाकार के द्वारा की गयी यह टीका उनके शास्त्र–परम्परा के निर्वाह,शास्त्रीयप्रतिबध्दता के साथ–साथ उनकी शास्त्रनिष्ठा की पूर्ण परिचायिका है। इसी प्रकार सर्गस्थितिनाशहेतवे पद पर टीका करते समय ब्रह्मसूत्र से लेकर उपनिषद् पर्यन्त उद्धरणों की माला प्रस्तुत कर देते हैं। विस्मय की बात यह है कि प्रथमतः वर्णन–वैविध्य से सुसज्जित कादम्बरी जैसा क्लिष्ट ग्रन्थ ततोपि वर्ण्य–विषय की स्पष्टता हेतु विविध शास्त्रों से ग्रहीत उध्दरणों से अलंकृता 'उन्मेषिणी' टीका सुधिय पाठकों के रसास्वाद में कहीं भी बाधक नहीं बनती अपितु शास्त्र का यथार्थ बोध कराती हुई यह 'उन्मेषिणी' टीका उनके अध्ययन सौकर्य में सहायिका होने के साथ गम्भीर,क्लिष्ट तथा शास्त्रगर्भित पदों के सरलीकरण में मार्गदर्शिका होती है, यथा सर्गस्थितिनाशहेतवे– सर्गः सृष्टिः स्थितिः– मर्यादा नाशश्च संहारः तेषां हेतवे कारणाय, "जन्माद्यस्य यतः (1/12) इति ब्रह्मसूत्रोक्ताय ब्राह्मणे। यतो वा इमामि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रत्ययन्त्यभिसंविशन्तीति तद् विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म इति तैत्तिरीयश्रुतिवर्णिते परमात्मने, इत्यर्थः।

इस प्रकार भावों की जीवन्तता को वर्तमान रखते हुए ज्ञान से परिपूर्ण प्रथम श्लोक के अन्यान्य पदों की व्याख्या भी द्रष्टव्य है– 'त्रिगुणात्मने' पद पर उन्मेषिणी टीका द्रष्टव्य है– त्रिगुणात्मने –त्रिगुणम् आत्मा स्वभावः यस्य तस्मै। 'आत्म जीवे धृतौ देहे स्वभावे परमात्मनि यत्ने' इति वैजयन्तीकोषः। त्रिगुणात्मकः अविवेकः जगत्कारणभूतः परमात्मनः स्वभावः। 'देवस्यैष स्वभावोऽयमाप्तकामस्य का स्पृहा' इति गौडपादीय कारिकासु प्रतिपादितम्। जगद्रचनास्थितिसंहारकाले निर्गुणोपि परमात्मा गुणस्वभावतां भजते इव। इति त्रिगुणस्वभावात्मके। त्रिगुणात्मने में वैजयन्ती कोश को उद्धृत करते हुए टीकाकार गौणपादीय कारिका का उद्धरण प्रस्तुत करते हैं। 'अजाय' पद की व्याख्या में बृहदारण्यकोपनिषद् का उद्धरण सहजतापूर्वक

उपस्थापित करते हैं–अजाय– न जायते इति अजः। 'स वा एष महानज आत्मा' इति वृहदारण्यके। "अजमानिद्रमद्वैतं बुद्धते तदा" इति माण्डूक्यकारिकासु तस्य अजत्वं गीयते। जन्मनिषेधेन मरणपर्यन्तमन्ये सर्वे निषिद्धाः अजाय इति। जन्मादिसर्वविक्रिया रहिते परमात्मने।

प्रथम श्लोक से कुछ पदों की टीका को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया गया। अथाह ज्ञान के सागर को समाहित की हुई कादम्बरी पर 'उन्मेषिणी' टीका निश्चित रूप से इस ज्ञानार्णव को द्विगुणित करती है। टीकाकार की ईमानदारी के साथ–साथ उनके अध्ययन की गहनता और विद्यार्थियों के प्रति उनकी यह शुभेच्छा है कि यथास्थान वे वैजयन्तीकोश, हलायुधकोष, अमरकोष, तथा मेदिनी कोषादि को उद्धृत करते हुए ग्रन्थ के तात्पर्य को सप्रमाण स्पष्ट करते हैं; यथा–

(1) सुरासुराधीशशिखान्तशायिनः– सुराणाम् अमराणाम् अमराःनिर्जरास्त्रिदशा विबुधाः सुरा..... इत्यमरः।

(2). शिखा दृ शिखा चूडा शिरस्यापि इति वैजयन्ती।

(3) भवच्छिदः – भवः क्षेमेशसंसारे सत्तायां प्राप्ति जन्मनोरू इति मेदिनी।

(4) पादपांसवः – पांसुः क्षोदो रेणुश्चूर्णं धूली रजश्च तुल्यार्थाः इति हलायुधः।

रामायण, महाभारत तथा पुराणादि के प्रसङ्गों का उपबृंहण करते हुए 'उन्मेषिणी' टीका में उन कथाओं के मूल उत्स का भी टीकाकार द्वारा संकेत किया गया है। यद्यपि यहाँ टीका में तत्तद् प्रसङ्गों को उपन्यस्त किया गया है तथापि यदि पाठक विशेष को और अधिक जानने का उत्साह अथवा जिज्ञासा है तो प्रसङ्ग विशेष में संकेतित ग्रन्थ का अभिधान उनके लिए उपकारी होगाद्य उदाहरणार्थ–विन्ध्याटवी वर्णन के प्रसङ्ग में दृ 'दण्डकारण्यन्तःपाति' पद से सम्बन्धित कथानक को उपन्यस्त करते हुए टीकाकार द्वारा "इति रामायणीयःउदन्तः" लिखकर आधारग्रन्थ का संकेत किया गया है। इसी प्रकार 'विन्ध्यगिरिणानुलङ्घिता आज्ञा' से सम्बन्धित कथानक का वर्णन करते हुए टीकाकार द्वारा "इति स्कन्दपुराणस्य काशीखण्डे" संकेत किया गया है।

आज जिन प्रतियोगी परीक्षाओं में कादम्बरी ग्रन्थ पाठ्यक्रम के रूप में निर्धारित है उन परीक्षाओं में प्रायः प्रतियोगियों से ग्रन्थ के सटीक अनुवाद ज्ञान के साथ व्याकरणज्ञान के अन्तर्गत समास,पद–निर्वचन तथा व्युत्पत्ति आदि की अपेक्षा की जाती है। टीकाकार द्वारा इस तथ्य का विशेष ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थियों के मध्य कादम्बरी ग्रन्थ का सटीक अनुवाद और प्रत्ययादि सम्बन्धी प्रमाणित ज्ञान ही पहुँचे। एक भाषा का दूसरी भाषा में सटीक अनुवाद करना क्लिष्ट कार्य है क्योंकि प्रत्येक भाषा की अपनी कुछ निजी विशेषताएँ होती हैं जो उस भाषा के भावों को अन्य भाषा में पूर्णरूप से जीवित रखते हुए रुपान्तरण में बाधक होती हैं। इस बात का विशेष ध्यान रखते हुए टीकाकार द्वारा कादम्बरी के अनुवादग्रन्थों की न्यूनता को हरण करने का उपक्रम किया गया है।

'अनन्तशास्त्रं बहुलाश्च विद्या' अर्थात् शास्त्रों का ज्ञान अनन्त है तथा विद्याएं अपरिमित हैं; अतः इस शास्त्रसागर में गोता लगाने वाला विद्वान स्वेच्छानुसार किन्तु अपनी क्षमतानुसार रत्नों की प्राप्ति करता है। संस्कृत जगत में "मुण्डे–मुण्डे मतिर्भिन्ना कुण्डे–कुण्डे नवं पयः" तथा 'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः' उक्तियां अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। अतः टीकाकार का जहाँ भी अन्य टीकाकारों से वैमत्य है अथवा व्याकरणादि से सम्बन्धित व्युत्पत्तियों तथा निर्वचनादि में मत वैभिन्य हैं, वहाँ टीकाकार एक विनयी विद्वान की भाँति 'एतच्चिन्त्यम्' लिखकर ग्रन्थ में आगे बढ़ते हैं; जिससे पाठकों के समक्ष शास्त्रार्थ बोध में बाधक वितण्डादि का बोझिलपन नहीं उपस्थित होता है।

गूढ़ से गूढ अर्थ को पाठकों तक पहुँचाना तथा गूढार्थ का सर्वांगप्रकाशन, 'उन्मेषिणी' की विशेषताओं में अन्यतम् है;यथा– बिन्दुमती, प्रहेलिकादि को सोदाहरण व्याख्यायित किया गया है–

1. बिन्दुमती–पद्यवर्णसंख्यया बिन्दुमात्रस्थापनेन तत्तद्वर्णोपलब्धिर्बिन्दुमती। यथा–.....
2. गूढेति–गूढःनिलीनःचतुर्थः तुरीयःपादःचरणःयस्मिन्सःप्रथमपाद त्रय एव चतुर्थपादस्याक्षरा–गूढाः स गूढचतुर्थपादः। तस्योदाहरणं यथा.....
3. प्रहेलिकेति–श्लेषे सति यत्र विशेष्यस्यानभिधानं सा प्रहेलिका।सा च शाब्दी आर्थीति द्विविधा।उदाहरणमुभयोः.....

टीकाकार को भाषायी परहेज नहीं है, यही कारण है कि उन्होंने भावों के सम्प्रेषणार्थ सरलतम् भाषा में विद्यार्थियों को समझाने का कार्य किया है। भूमिका लेखन में उर्दू के शब्दों का उन्होंने सहज प्रयोग किया है; यथा– आलम। इसके साथ ही अनुवाद में अप्रचलित अथवा अपने अर्थ विशिष्ट से भिन्न रूप में प्रचलित शब्दों के आंग्ल– अनुवाद को टीकाकार द्वारा सहजता से ग्रन्थ में स्थान दिया गया है; यथा– कस्तूरी की सुगन्ध (scent)। जहाँ कहीं एक अव्यय मात्र को रखने से अथवा अनुवाद में एक अतिरिक्त शब्द (जो मूल में नहीं पठित है) को रखने से अनुवाद सरल होता है वहां टीकाकार कोष्ठक में विद्यार्थियों के सौकर्य के लिए वह शब्द लिख देते हैं।

पुस्तक की सूक्ष्म प्रूफ रीडिंग आदि के द्वारा टीका को पूर्ण शुद्ध रखने का श्लाघनीय प्रयास किया गया है तथापि एक या दो स्थानों पर टंकण की असावधानी आदि लघु त्रुटि होना मानवीय स्वभाव है। मुद्रक द्वारा आनेवाले संस्करणों में अनुवाद और मूल पाठ के पृष्ठों का विशेष ध्यान रखते हुए प्रत्येक गद्यखण्ड के समक्ष अथवा अधोभाग में ही अनुवाद समाहित करने का सफल यत्न किया जायेगा ऐसा पूर्ण विश्वास है।

समीक्षक
सौरभ तिवारी(शोधच्छात्र)
संस्कृत तथा प्राकृतभाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ।